अप्रैल-जून अंक : 91 2017
April-June ISSN : 0976-0024

महिला Mahila
विधि भारती Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

मुख्य संपादक
सन्तोष खन्ना

पत्रिका में व्यक्त विचारों से संपादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

व्यक्तियों के लिए		संस्थाओं के लिए
मूल्य 100/- रुपए	डाक ख़र्च अलग	वार्षिक मूल्य 500/- रुपए
वार्षिक मूल्य 450/- रुपए	**वर्ष 23**	आजीवन संस्था सदस्य 20,000/- रुपए
आजीवन सदस्य 4000/- रुपए	**अंक 91**	Citation No. MVB-23/2017

विधि भारती परिषद्
बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग
दिल्ली-110088 (भारत)
मोबाइल : 09899651872, 09899651272
फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335
E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

'महिला विधि भारती'

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

अंक : अंक-91 (अप्रैल-जून, 2017)

मुख्य संपादक : सन्तोष खन्ना

परिषद् की कार्यकारिणी

संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. श्रीमती मंजू चौधरी (कोषाध्यक्ष)
5. डॉ. प्रवेश सक्सेना (सदस्य)
6. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
7. श्री अनिल गोयल (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. श्री जी.आर. गुप्ता (सदस्य)
10. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
11. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
12. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
13. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
14. डॉ. एच. बालसुब्रह्मण्यम (सदस्य)
15. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
16. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

प्रदेश प्रभारी

1. प्रो. देवदत्त शर्मा (उत्तर प्रदेश) 09236003140
2. प्रो. (डॉ.) सुरेंद्र यादव (राजस्थान) 09414442947

परामर्श मंडल

1. श्री एस.पी. सबरवाल
2. प्रो. (डॉ.) गुरजीत सिंह
3. प्रो. (डॉ.) एल.आर. सिंह
4. डॉ. उषा देव
5. प्रो. के.पी.एस. महलवार
6. श्री हरनाम दास टक्कर

विधि भारती परिषद्

बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)

फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335, **मोबाइल :** 09899651872, 09899651272

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

अंक 91 में

1. कश्मीर जो कभी स्वर्ग था / **संपादकीय** -- 117
2. भारतीय संविधान : सामाजिक न्याय व चुनौतियाँ / **डॉ. उर्मिल वत्स** -- 121
3. भारतीय संसदीय अधिनियम एवं महिलाओं का उत्थान / **डॉ. भगवानदास** -- 126
4. स्वतंत्रोत्तर भारत में पुलिस की भूमिका / **डॉ. अनुपमा यादव एवं डॉ. ऋतु व्यास** -- 130
5. Scope of Women Empowerment in Indian Law / **Dr. Dinesh Kumar Singh** -- 137
6. महिला सशक्तिकरण और अधिकार / **प्रो. नीता बोरा शर्मा** -- 142

कविता

7. (1) नारी! मत माँग अधिकार; (2) बस, चला-चल / **डॉ. उषा देव** -- 150
8. ऐसा पिता ने कहा था (कविता) / **डॉ. अनिता डगोरे** -- 151
9. स्कर्ट या शार्ट्स नहीं सोच जिम्मेदार है / **सुमन कुमारी** -- 152
10. आइये! कुछ नेक करें / **रेनू** -- 154
11. प्रश्न न्यायाधीशों की नियुक्ति का / **डॉ. (श्रीमती) जयश्री गुप्ता** -- 155
12. Right to Food in Global and National Perspective / **Garima Yadav** -- 160
13. महिलाओं को मिलने वाले अवकाशों में सुधार की आवश्यकता / **डॉ. कमला फुलोरिया** -- 167
14. मौलाना आजाद और शिक्षा का अधिकार / **डॉ. रणवीर सिंह** -- 172
15. हरियाणा मानव अधिकार अयोग : गठन एवं उपलब्धियाँ / **सुख देव रेबारी** -- 177

कहानी

16. भाग्य लक्ष्मी / **डॉ. जसपाली चौहान** -- 183
17. Understanding E-Contracts / **Ms. Shubhi Mehta Dhaker** -- 186
18. महिला सुरक्षा और भारतीय कानूनों की प्रासंगिकता / **रंजना सुराणा** -- 194
19. लोक साहित्य और भारतीय स्वतत्रंता संग्राम / **डॉ. श्रीमती राजेश जैन** -- 200

रिपोर्ट

20. विधि भारती परिषद् का 'भारत में चुनाव : हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार' विषय पर सेमिनार / **डॉ. आशु खन्ना** -- 204
21. Our New Life Members -- 212

लेखक मंडल

Dr. Urmil Vats : Assistant Professor, Shyama Prasad Mukherji College, University of Delhi, Delhi

डॉ. भगवानदास : प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दमोह (म.प्र.) 470661

डॉ. अनुपमा यादव : शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय (भेल) मध्य प्रदेश

डॉ. ऋतु व्यास : अतिथि विद्वान, राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गढ़ाकोटा (मध्य प्रदेश)

Dr. Dinesh Kumar Singh : Principal, Govt. Law College, Ajmer and Dean, Faculty of Law, M.D.S. Universiy, Ajmer

प्रो. नीता बोरा शर्मा : राजनीति विज्ञान विभाग, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल
मोबाइल : 09837418108,

सुमन कुमारी : शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

रेनू : के. 292, शकूरपुर, आनंद वास, दिल्ली-110034

डॉ. उषा देव : पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग), माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110002

डॉ. अनिता डगोरे : सहायक निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, पश्चिमी खंड-VII, रामाकृष्णा पुरम, नई दिल्ली-110066, **मोबाइल :** 9540479172

डॉ. (श्रीमती) जयश्री गुप्ता : प्राचार्य, स्कूल ऑफ लॉ, श्री सत्यसाँई विश्वविद्यालय, सीहोर (मध्य प्रदेश), **मोबाइल :** 8962464750

Garima Yadav : M.A., LLM, Civil Judge and Research Scholar in Law UOR

डॉ. कमला फुलोरिया : असिस्टेंट प्रोफेसर अर्थशास्त्र, एम.बी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी, जिला-नैनीताल, (उत्तराखंड)।

डॉ. रणवीर सिंह : अतिथि व्याख्याता, राजनीति एवं लोकप्रशासन विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय, सागर (मध्य प्रदेश)

सुख देव रेबारी : शोधार्थी, विश्वविद्यालय विधि महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

Dr. Jaspali Chauhan : Associate Professor, Department of Hindi, Atma Ram Sanatan Dharma College, University of Delhi, Dhaula Kuan, New Delhi-110021, **Mobile :** 9810053059

Dr. Shubi Mehta Dhakar : Assistant Professor, Bhupal Nobles' University, Udaipur (Rajasthan), **Mobile :** 8829963010

रंजना सुराणा : e-mail : enquiry@anushkaacademy.com

डॉ. श्रीमती राजेश जैन : प्राध्यापक राजनीति विज्ञान एवं विशेष कर्त्तव्यस्थ अधिकारी, उच्च शिक्षा सागर संभाग, सागर (मध्य प्रदेश)

डॉ. आशु खन्ना : डीन, महेंद्रा टेक स्मार्ट अकादमी, दिल्ली

संपादकीय

कश्मीर जो कभी स्वर्ग था

कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी देश की समस्या को जितना अधिक सुलझाने का प्रयास किया जाता है उतना ही अधिक वह उलझती जाती है। कभी-कभी कोई घाव उपचार के बावजूद भरता नहीं बल्कि नासूर बन कर हर समय टीसता रहता है जिसके कारण प्राणों के लाले पड़े रहते हैं, कश्मीर समस्या को भी कुछ इस प्रकार की संज्ञा दी जा सकती है। इसी समस्या को लेकर पाकिस्तान के साथ भारत को चार युद्ध लड़ने पड़े, हर बार पाकिस्तान को मुँह की खानी पड़ी, किंतु पाकिस्तान कभी सुधरा नहीं बल्कि कश्मीर को ले कर उसने भारत के विरुद्ध अब अघोषित युद्ध छेड़ रखा है, बल्कि यूँ कहें तो अतिश्योक्ति न होगी कि पाकिस्तान के साथ कश्मीर समस्या को ले कर आरंभ से ही युद्ध कभी थमा ही नहीं, कभी घोषित युद्ध लड़े गए तो कभी अघोषित युद्ध। बल्कि अघोषित युद्ध तो हमेशा ही लड़ा जाता रहा है और अब भी लंबे अरसे से अघोषित युद्ध लड़ा जा रहा है क्योंकि आतंकवाद के सहारे वह कश्मीर की जनता को सकून से नहीं बैठने देता, सीमा पार से आतंकियों का बराबर आना और यहाँ के लोगों को सुरक्षा की दीवार बना कर भारतीय सेना और अन्य सुरक्षा बलों को निशाना बनाना वर्षों से जारी है।

कश्मीर की समस्या के संबंध में भारत पाकिस्तान के बीच कई बार समझौते हुए, कई बार वार्ताओं का दौर भी चला किंतु पाकिस्तान की कभी मंशा इस समस्या को हल करने की रही ही नहीं, वह इस समस्या का समाधान नहीं चाहता, कश्मीर को हड़पना चाहता है। कश्मीर में मुस्लिम जनसंख्या बहुमत में है, इसलिए उसका तर्क है कि कश्मीर उसका हिस्सा है जबकि वह कश्मीर के इन 70 वर्षों के इतिहास को बिल्कुल झुठला देता है कि महाराज हरि सिंह ने जम्मू और कश्मीर का भारत में विलय कर दिया था और जम्मू और कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। भारत की दृष्टि से यदि कश्मीर समस्या का समाधान अभी रहता है तो वह यह है कि पाकिस्तान को पाक अधिकृत कश्मीर वाले इलाके को खाली करना होगा क्योंकि वह हिस्सा भी वैध रूप से भारत का अभिन्न अंग है। अब तो वहाँ की जनता भी पाकिस्तान के विरुद्ध उठ खड़ी हुई है और वहाँ आए दिन वह लोग पाकिस्तान से मुक्त होने के लिए उसके

विरुद्ध विरोध और प्रदर्शन कर रहे हैं।

कश्मीर की अधिकांश जनता पाकिस्तान के साथ नहीं जाना चाहती, परंतु चिंता का विषय यह है कि पाकिस्तान और अन्य ताकतें वहाँ तरह-तरह से आज के युवा वर्ग को गुमराह करने का भरसक प्रयास कर रही हैं, यह प्रयास धार्मिक कट्टरता फैला कर, घाटी में पैसे को पानी की तरह बहा कर और घाटी में निरंतर आतंकवादियों की घुसपैठ कर कत्ल कर किए जा रहे हैं। वहाँ पत्थर फैंकने की घटनाओं और नित नए आतंकवादियों से इनकाउंटर होते रहते हैं जिसमें आतंकवादी तो मारे जाते हैं, परंतु आतंकवादियों को खदेड़ने और उनका सफाया करने की प्रक्रिया में सुरक्षा बलों के जवान भी शहीद होते हैं तो साथ ही कश्मीरी नागरिकों को भी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है।

पिछले कुछ वर्षों से पाकिस्तान ने अपने नापाक मंसूबों को पूरा करने के लिए कश्मीर के युवाओं में अपनी पैठ बनानी शुरू कर रखी है। घाटी में बड़े पैमाने पर रेडीकलाइजेशन किया जा रहा है जिसमें पाकिस्तान के साथ इस्लामिक स्टेट के तत्त्व तथा सऊदी अरब के सलाफीवाद अथवा वहाबीवाद के तत्त्व शामिल हैं। सऊदी अरब का सलाफीवाद या वहाबीवाद एक अलग प्रकार का कट्टर इस्लाम है जो कश्मीर के सूफीवाद अथवा कश्मीरियत से एकदम उलट है। आज पूरे विश्व को आतंक में झोंकने वाले बहावी सुन्नी मुस्लिम हैं। सऊदी अरब में नज्द नामक शहर इनका प्रमुख केंद्र है। नज्द के बानू तमीम जनजाति के अब्दुल वहाब नज्दी ने ही वहाबी पंथ चलाया था। बहावी कट्टरता और जिहाद में विश्वास रखते हैं और यह तलवार के बल पर जिहाद में यकीन रखते हैं। सऊदी अरब के वहाबीवाद तत्त्व भारत में विशेष रूप से कश्मीर घाटी में वहाबीवाद फैलाने का प्रयास कर रहे हैं। कहा जाता है कि वहाबीवाद को भारत में फैलाने के लिए लोगों के पास बहुत पैसा है और विशेष रूप से घाटी में पैसा पानी की तरह बहा कर वहाँ यह कट्टरवाद वहाँ फैलाया जा रहा है। इस तथ्य के बारे में बहुत कम लोगों को पता है पिछले दिनों जी न्यूज़ के एक पत्रकार ने घाटी का दौरा किया था और वह यह देख कर हैरान रह गया था कि जिस कश्मीर घाटी में बाहरी लोगों का जमीन खरीदना मना है वहाँ लगभग हर गाँव में बड़ी-बड़ी आधुनिक इमारतों वाली मस्जिदें और मदरसें बन गए हैं और वहाबीवाद के मौलवी अपने धर्म का प्रचार करने में दिन-रात एक किए दे रहे हैं। यही नहीं, पिछले दशकों में जिस घाटी में कश्मीरी पंडितों का कत्लेआम किया गया और उन्हें घाटी से घर-बेघर कर दिया गया था वहीं पर बर्मा के रोहिंग्या मुसलमान शरणार्थी बड़ी संख्या में रह रहे हैं।

वहाबीवाद पूरे विश्व में इस कट्टरता को फैला कर अपना वर्चस्व कायम करना चाहता है। इसी के तहत बगदादी का उद्‌भव हुआ और विश्व के कई क्षेत्रों में इस्लामिक

कट्टरता के अंतर्गत हिंसा और रक्तपात का खुला खेल चल रहा है। इसी अवधारणा को घाटी में भी अंजाम दिया जा रहा है। एक अनुमान के अनुसार घाटी के मुसलमानों में से काफी लोग इस कट्टरता के प्रभाव में आ चुके हैं। तभी जब भी कहीं आतंकवादियों के छुपे होने पर सुरक्षा दल उनके लिए तलाशी अभियान चलाते हैं तो वहाँ के आम नागरिक विशेष रूप से युवक सुरक्षा बलों पर पथराव करना शुरु कर देते हैं और नागरिक आतंकवादियों को भाग जाने में सहायता करने के लिए उनकी ढाल बन कर सुरक्षा बलों के सामने आ खड़े होते हैं। ऐसी स्थिति में सुरक्षा बल इन्हीं नागरिकों की सुरक्षा के लिए बल का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।

यह भी आश्चर्य की बात है कि घाटी में कट्टरता का माहौल बहुत समय से बनाया जा रहा था। जैसे पता चला कि वहाँ 25-30 टी.वी. चैनल बिना अनुमति के अपनी गतिविधियों को अंजाम दे रहे थे, यह टी.वी. चैनल न केवल धार्मिक उन्माद फैला रहे थे बल्कि भारत विरोधी प्रचार भी कर रहे थे, यह चैनल न केवल पाकिस्तान के थे बल्कि सऊदी अरब के भी थे और जाकिर नायक के भी थे परंतु सरकार को इसके बारे में कुछ पता ही नहीं था। अब जा कर इस बात का पता चला तो सरकार ने इन चैनलों पर पाबंदी लगाई है किंतु इस बीच घाटी के युवकों की विचारधारा को कितना दूषित किया जा चुका है कि वहाँ प्रतिदिन होने वाली घटनाओं से अंदाजा लगाया भी जा सकता है और नहीं भी।

वास्तव में कश्मीर घाटी में इस इस्लामिक कट्टरवाद ने जितना नुकसान किया होगा, उतना किसी और वजह से नहीं हुआ होगा क्योंकि युवाओं को बरगलाना बहुत सुगम होता है और जब साथ ही पेटरोडालर भी हों तो यह और भी सुगम हो जाता है। कश्मीर की नासूर बन चुकी समस्या का समाधान कट्टरवाद से निपटे बिना संभव नहीं है। क्या सरकार इस ओर ध्यान देगी?

ऐसा नहीं है कि वहाबीवाद का प्रभाव केवल कश्मीर में है, भारत में भी ऐसे बहुत सारे कट्टर इस्लामिक वहाबीवादी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सक्रिय हैं जिनसे बच कर रहना होगा। इन तत्त्वों से न केवल देश बल्कि शिया संप्रदाय के मुसलमानों को भी खतरा है क्योंकि वहाबियत के वजूद में आते ही शियाओं के साथ दुश्मनी का ऐलान कर दिया था बल्कि पहले तो यह समुदाय शियाओं के खिलाफ ही बनाया गया था।

कश्मीर में 95 प्रतिशत मुस्लिम सुन्नी हैं और केवल 5-10 प्रतिशत ही शिया हैं। स्पष्ट है कि घाटी के जिले ही अशांत है और वहीं पर सुरक्षा बलों को सक्रिय रहना पड़ता है। कुछ समय से वहाँ पत्थरबाजी की घटनाएँ बहुत बढ़ गई है और सुरक्षा

बल उनके विरुद्ध वाँछित मात्रा में बल का प्रयोग नहीं कर पाते। परंतु धीरे-धीरे इस संबंध में दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है। हाल में सेनाध्यक्ष श्री विपिन रावत ने सही कहा था कि जब सेना पर हमला होता है तो वह अपने जवानों से इंतजार करने और मरने के लिए नहीं कह सकते। हालाँकि उनके इस बयान का कई लोगों ने विरोध भी किया है किंतु यह भी सही है कि सेना के जवान कब तक बिना बल प्रयोग पत्थर खाते रहेंगे? कश्मीर के नौजवानों को केवल गुमराह नहीं माना जा सकता बल्कि उनका रेडियोकाइलेशन किया जा रहा है और उनमें से बहुत से या तो युवा आतंकवादी बनते जा रहे हैं या सुरक्षा बलों पर पत्थरबाजी करने, पाकिस्तान या आई.एस. का झंडा फहराने में लिप्त हैं। उनके प्रति कड़ा रूख अपनाए जाने की जरूरत है।

हाल ही में प्रकाश में आए कुछ वीडियोज़ से पता चलता है कि कश्मीर घाटी में कट्टरवादी तत्त्व छोटे-छोटे बच्चों के दिमाग में भारत विरोधी, सेना विरोधी एवं इनसानियत विरोधी बातें ठूँस रहे हैं जो वस्तुतः बहुत ही शोचनीय एवं निंदनीय है। हे भगवान! बचपने के साथ ऐसा खिलवाड़? जब किसी भी धर्म में कट्टरता की चाशनी मिला दी जाती है तो स्थिति बड़ी भयावह बन जाती है। आज समूचा विश्व इस प्रकार की कट्टरता की गिरफ्त में आता जा रहा है; यही बात कश्मीर घाटी के लिए भी लागू होती है। ऐसे लोगों से निपटने के लिए अत्यंत सूझबूझ की आवश्यकता है।

शरारती माहौल का देखो मिजाज
बना रहा पागल कोई शातिर दिमाग
बिछने लगी है कई छलों की बिसात
गूँज रहा स्वर, होशियार! होशियार!!

❑

डॉ. उर्मिल वत्स

भारतीय संविधान : सामाजिक न्याय व चुनौतियाँ

भारत का संविधान एक ऐसा संविधान है, जो संसार के प्रमुख संविधानों के अच्छे तत्त्वों का मिश्रण है। भारतीय संविधान के निर्माताओं का यह मत था कि भारत के लिए एक उत्तम तथा व्यवहारिक संविधान बनाया जाए, जो भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल हो। उनको संसार के प्रसिद्ध तथा सफल संविधानों के अच्छे तत्त्व लेने में कोई संकोच न था। पुरातन काल से ही भारतवासियों का यह मूल विचार रहा है कि अच्छाई जहाँ से भी प्राप्त हो, ले लेनी चाहिए। डॉ. एम.पी. शर्मा के अनुसार, ''हमारे संविधान निर्माताओं ने कभी भी मौलिक तथा विलक्षण संविधान का दावा नहीं किया था। वह दूसरे देशों के अनुभवों से लाभ उठा कर एक आदर्श क्रियात्मक संविधान बनाना चाहते थे।''

भारत के लिए अनुपम एवं उपयोगी संविधान बनाने से पहले उन्होंने संसार के प्रसिद्ध संविधानों के अध्ययन करने का निश्चय किया। संविधान सभा के कार्यालय ने बी.एन. राव के नेतृत्व में कार्य किया। बी.एन. राव संविधान सभा के संवैधानिक परामर्शदाता थे।

संविधान समाज की आत्मा भी है और आईना भी। समाज की संरचना और राजनैतिक शासन के रूप-रंग की जानकारी भी संविधान के माध्यम से चित्रित होती है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि को समेटे अभिसमयों और लिखित विधानों का वह दस्तावेज जो नागरिकों के जीवन को न केवल नियंत्रित एवं संचालित करता हो वरन् उसके सर्वांगीण, चतुर्दिक विकास के लिए मार्ग प्रशस्त करता हो, संविधान कहलाता है। एक आम नागरिक से लेकर केंद्रीय सरकार तक सभी इससे अधिकार प्राप्त करते हैं और उसी को आधार बना अपने कर्त्तव्यों का पालन भी करते हैं। कोई भी बिना संविधान के एक व्यवस्थित शासन की कल्पना भी नहीं कर सकता जो सभी को एकता के बंधन में बाँध सके, साथ ही सभी के अधिकार, कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व इत्यादि

सुनिश्चित कर सके। संविधान निर्माताओं के समक्ष मुख्य प्रश्न होता है कि किस प्रकार के संविधान का निर्माण किया जाए जिससे कि वर्तमान या समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप प्रत्येक नागरिक उससे संतुष्ट हो सके। भारतीय संविधान निर्माताओं के समक्ष भी कुछ इस प्रकार की चुनौतियाँ थी। सभी की भाषा, संस्कृति, धर्मों इत्यादि की सुरक्षा एवं अस्मिता को सुरक्षित करने का कार्य संविधान निर्माताओं के कंधों पर था।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना संपूर्ण संविधान का दर्शन है जिसमें संविधान के उद्देश्य, लक्ष्य, आदर्श तथा प्रयोजन स्पष्ट रूप से दिए गए हैं। प्रस्तावना में भारतीय गणराज्य के चार उद्देश्य हैं -- न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व। न्याय से हमारा अभिप्राय व्यक्तिक हितों एवं सामाजिक हितों के बीच समन्वय स्थापित करने से है जिसमें सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय को रखा गया है। सामाजिक न्याय के विचार में यह भावना निहित है कि समाज में सभी प्रकार की असमानताओं का अंत होना चाहिए। आर्थिक न्याय में आर्थिक समानता का विचार शामिल है तथा राजनीतिक न्याय इस बात का आश्वासन देता है कि जाति, मूलवंश, संप्रदाय, धर्म या जन्म स्थान के आधार पर विभेद के बिना सभी नागरिकों को राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने के अधिकारों में बराबर हिस्सा मिले।

सामाजिक न्याय को पाने के लिए हमें अनेक चुनौतियों का सामना करना है। ये इतनी भयावह है कि ज़मीनी स्तर पर न्याय प्राप्त करना बहुत कठिन-सा प्रतीत होता है। सामाजिक न्याय के सिद्धांत के अनुसार सामाजिक जीवन में सब मनुष्यों की गरिमा स्वीकार की जाए, स्त्री-पुरुष, गोरे-काले, जाति-धर्म या क्षेत्र इत्यादि के आधार पर किसी व्यक्ति को बड़ा-छोटा या ऊँचा-नीचा न माना जाए, शिक्षा और उन्नति के अवसर सबको समान रूप से उपलब्ध हों। सब मनुष्य मिल-जुल कर साहित्य, कला, संस्कृति और तकनीकी साधनों का उपयोग और उपभोग कर सकें। सामाजिक न्याय और सामाजिक समानता को कार्य रूप में परिलक्षित करने के लिए भारतीय संविधान में मूल अधिकार और राजनीति के निर्देशक सिद्धांत प्रदान किए गए हैं। संविधान द्वारा बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति के लिए मूल अधिकारों के संबंध में गारंटी दी गई है। इनमें प्रत्येक व्यक्ति के लिए समानता, स्वतंत्रता, सम्मान, राष्ट्रहित और राष्ट्रीय एकता को समाहित किया गया है। ये 'मूल' इसलिए भी है क्योंकि ये व्यक्ति के चहुँमुखी विकास के लिए आवश्यक हैं। मौलिक अधिकारों के भाग में संविधान निर्माताओं ने राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना की आशा की थी तो राजनीति के नीति निर्देशक तत्त्वों द्वारा भारत में आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना करने का प्रयास किया गया है। धारा-38 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ''राज्य अधिक से अधिक प्रभावपूर्ण रूप में एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था

की स्थापना तथा सुरक्षा, जिसमें आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक न्याय की प्राप्ति हो, जनता के हित के विकास और राष्ट्रीय जीवन की प्रत्येक संस्था को इस संबंध में सूचित करेगा।''

सामूहिक रूप से ये सिद्धांत लोकतंत्रीय भारत का शिलान्यास करते हैं। यह भारतीय जनता के आदर्शों व आकांक्षाओं का वह भाग है जिन्हें वह एक सीमित अवधि के अंदर प्राप्त करना चाहती है। जब भारत सरकार इन्हें कार्य रूप में लागू कर पाएगी तो भारत एक सच्चा कल्याणकारी राज्य हो सकेगा।'' -- डॉ. पायली

पर्यावरण संपूर्ण मानवता के जीवन का आधार है। यह पेड़, पौधों और जीवों को जीवन देता है और जीने योग्य वातावरण के साथ-साथ आवश्यक मूलभूत जरूरतों -- रोटी, कपड़ा, मकान, कच्चा माल आदि उपलब्ध कराता है। आज की वैज्ञानिक प्रगति, प्रौद्योगिक उन्नति, आनुवांशिकी, कृषि उद्योग आदि की उपलब्धता प्रकृति से ही संभव हो पाई है किंतु प्रकृति के अप्राकृतिक दोहन ने इसके अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है। राजधानी का पॉल्यूशन ख़तरनाक लेबल पर पहुँच गया। यह केवल राजधानी की ही समस्या नहीं, बल्कि पूरे विश्व की ही समस्या है। पर्यावरण संबंधी अपकर्षण की भीषण समस्या ने आज संसार के सभी विचारकों को सोचने पर मजबूर कर दिया है।

आज लगभग सभी लोग पर्यावरण के बारे में बातचीत करते हैं लेकिन केवल कुछ ही लोग ऐसे हैं जो यह जानते हैं कि क्या करने की आवश्यकता है तथा कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनको अभी इस क्षेत्र में वास्तविक अनुभव प्राप्त करना है। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि पर्यावरण चेतना अभियान को वास्तविक रूप में लोगों को शिक्षित करने के स्थान पर राजनीतिक लाभ के लिए अधिक प्रयोग किया गया। हैनरी डी. लोस ने सत्य ही कहा है -- ''एक उपयुक्त ग्रह की उपस्थिति में एक सुंदर घर की क्या उपयोगिता है।'' अगर हम पर्यावरण संरक्षण में आज कोई कदम उठाते हैं तो इसका परिणाम हमें अगले 40-50 वर्षों में देखने को मिलता है। (Prof. Anubha Kaushik and Prof. C.P. Kaushik, Environment Study, 2014)

जनसंख्या वृद्धि : भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या एक बेहद गंभीर समस्या है। सवा सौ करोड़ से भी अधिक (127,42,39,769) जनसंख्या के लिए मूलभूत सुविधाएँ जुटाना भी किसी चुनौती से कम नहीं है। अगर जनसंख्या वृद्धि की दर यही रही तो सन् 2050 में हमारी जनसंख्या विश्व में प्रथम स्थान पर होगी। क्या इतनी अधिक संख्या के लिए भोजन, आवास, शिक्षा, रोजगार आदि हमारे पास साधन हैं? अगर आँकड़ों पर नजर डालें तो स्वतंत्रता के पश्चात् हमने एक दूसरा भारत जोड़ दिया। आज स्थिति यह है कि विश्व का हर छठा आदमी हिंदुस्तानी है।

स्वच्छता : 2006 में 45,000 मौत डायरिया के कारण हुई। स्वच्छता के महत्त्व

को समझते हुए वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा स्वच्छ भारत अभियान शुरू किया गया है। अभियान बहुत सराहनीय है लेकिन ज़मीनी स्तर पर कार्यान्वित करने के लिए सबका सहयोग दृढ़ रूप से होना चाहिए।

भारतीय सरकार द्वारा 1986 में Central Rural Sanitation Programme यह सोच कर शुरू किया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में इससे सुधार आएगा। बाद में 1999 में इसे Total Sanitation के रूप में शुरू किया गया। इस समय 2017 तक पूरे भारतवर्ष में पूर्ण रूप से इसे लागू करने का सरकार द्वारा लक्ष्य रखा गया है।

शिक्षा : किसी भी देश व समाज का विकास तभी हो सकता है जब उसके नागरिक शिक्षित हों, सभ्य हों, प्रगतिशील हों व सौहार्द्र की भावना से परिपूर्ण हों। प्रथम शिक्षा मंत्री मौलाना आजाद द्वारा प्राथमिक स्तर पर शिक्षा अनिवार्य व निःशुल्क शुरू की गई। 6 से 14 वर्ष के बच्चों की बाल मजदूरी पर भी प्रतिबंध लगाया गया। शिक्षा के स्तर को उच्च रखने के लिए मिड-डे मील भी शुरू किया गया। सर्वशिक्षा अभियान व शिक्षा का अधिकार इसी दिशा में उठाए गए कदम हैं। सवाल ये है कि शिक्षा को लेकर इतनी सारी योजनाएँ चलाई जा रही हैं फिर भी आँकड़े चिंताजनक मिलते हैं। भारत में महिलाओं की साक्षरता दर 60.6 प्रतिशत है जबकि पुरुषों की साक्षरता दर 81.3 प्रतिशत है। इसके साथ-साथ बाल-विवाह, घरेलू हिंसा, एसिड हमला, कन्या-भ्रूण हत्या, हॉनर किलिंग, बलात्कार इत्यादि ऐसी समस्याएँ हैं जिनका निवारण एक बेहद जरूरी व सामाजिक जिम्मेदारी है।

संसार में सबसे ज्यादा नौजवान भारत में हैं। लेकिन इसको लेकर भी चुनौतियाँ कम नहीं हैं। हमारे पास हैल्थी यूथ कितना है। स्कूल स्तर पर ही बच्चे बीड़ी-सिगरेट व अन्य नशीली चीजों का शिकार हो जाते हैं। अभी हाल ही में दिल्ली के नांगलोई के स्कूल टीचर मुकेश शर्मा जो कि हिंदी विभाग में थे उनकी उन्हीं के विद्यार्थियों द्वारा जिस तरह से निर्मम हत्या की गई; चहुँ ओर इसकी घोर निंदा की गई। (26 सितंबर, 2016) लेकिन अब हम सबके सामने बहुत सारे प्रश्न व चुनौतियाँ हैं। समाज में जो कभी गुरू व शिष्य का रिश्ता सबसे ऊपर माना जाता था उस पर प्रश्नचिह्न लग गए? कक्षा 12 का बच्चा नवयुवक बनने की कगार पर होता है, उनका दिमाग अगर ऐसी मनोवृत्ति के साथ विकसित हो रहा हो तो निश्चय ही समाज पतन की ओर अग्रसर है। मुकेश शर्मा जी बहुत ही अनुशासन प्रिय अध्यापक थे जोकि उनके सभी साथियों द्वारा ज्ञात हुआ। जानकर अत्यंत पीड़ा हुई कि हमारी संस्कृति, सभ्यता को किस तरह से नुकसान हो रहा है।

धार्मिक हिंसा : संवैधानिक रूप से भारत धर्म-निरपेक्ष राज्य है लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत में सांप्रदायिक तनाव व हिंसा हुई है, वह अनेक घटनाओं से ज्ञात होता है। चाहे वो कश्मीर में कश्मीरी पंडितों का पलायन हो, जिसमें लगभग तीन लाख परिवार प्रभावित हुए, 1984 के सिक्ख दंगे हों, 1992 का बाबरी मस्जिद घटनाक्रम हो, गुजरात

दंगे हों या फिर मेरठ की हिंसा। निश्चय ही देश व समाज के लिए इस तरह की घटनाओं का होना उसके विकास को प्रभावित करता है।

जाति आधारित हिंसा : जाति आधारित हिंसा समाज में कम होती हुई नजर नहीं आती। भारत के अनेक हिस्सों में जाति आधारित घटनाएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हैं। हाल ही में रोहित बेमुल्ला की घटना हो या हरियाणा का जाट आंदोलन जिसमें पूरा प्रदेश आरक्षण की आग में जलता हुआ दिखाई दिया। इसी प्रकार, मंडल कमीशन, राजस्थान में गुज्जर आंदोलन, ये सभी घटनाएँ जाति पर ही आधारित हैं। देश के सामने मुख्य समस्या यह है कि देश जाति के आधार पर क्यूँ बँट रहा है।

अंधविश्वास : एक ओर हम आधुनिक भारत की बात करते हैं दूसरी ओर अंधविश्वास के मकड़जाल में जकड़े हुए हैं। धर्म के नाम पर हमेशा लोगों को ठगा जाता है। समस्या वहाँ और भी गंभीर होती है जब समाज के अशिक्षित वर्ग के साथ-साथ शिक्षित वर्ग भी इसकी गिरफ्त में आता है।

क्षेत्रीयता की समस्या : क्षेत्रीयता की भावना का विकास दो रूपों में हुआ है -- पहला रूप, क्षेत्र के लोगों के हितों की पूर्ति के लिए इसे सौदेबाजी के रूप में इस्तेमाल करने का है। दूसरा रूप, राष्ट्रीय एकता-अखंडता के विरुद्ध उसमें दरार डालने से संबंधित होता है। किसी क्षेत्र के लोगों को पृथकतावादी आंदोलन के लिए आर्थिक पिछड़ापन भी प्रेरित करता है। अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जिनका आर्थिक विकास बहुत कम हुआ है। तेलंगाना, उत्तर प्रदेश का पूर्वी भाग, विदर्भ, असम आदि ऐसे कई क्षेत्र हैं जो आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। इन क्षेत्रों में पृथकतावादी प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं।

अतः हम देखते हैं कि भारतीय लोकतंत्र के समक्ष अनेक चुनौतियाँ हैं। भाषायी उन्माद, दल-बदल की राजनीति, भ्रष्टाचार, लिंग-भेद, प्रेस की स्वतंत्रता की समस्या, चाटुकारिता, अशिक्षा, दरिद्रता इत्यादि जो कि देश के विकास के रास्ते में बाधा है। इन समस्याओं का समाधान एक स्वस्थ मानसिकता के साथ ही संभव है।

❑

संदर्भ

1. Rajni Kothari, Caste in Indian Politics, New Delhi, Orient Longman, 1970
2. Creamy Layer for Sc, STs, Too, The Times of India, New Delhi, 20 Oct. 2006
3. Bipin Chandra, The Rise and Growth of Economic Nationalism in India, Delhi
4. Atul Kohli, The State and Poverty in India, The Politics of Reform, Bombay

डॉ. भगवानदास

भारतीय संसदीय अधिनियम एवं महिलाओं का उत्थान

किसी भी राष्ट्र व समाज की प्रगति का मापदंड वहाँ की महिलाओं एवं सर्वहारा वर्ग की स्थिति है, केवल राष्ट्र व समाज का ही नहीं, बल्कि मनुष्यता का सर्वांगीण विकास भी इन्हीं वर्गों पर अवलंबित होता है, अतः इन्हें नज़र अंदाज़ करके उन्नति की मंजिल प्राप्त नहीं की जा सकती। सर्वांगीण व स्थिर विकास हेतु विकास के पथ में इन वर्गों की सहभागिता समीचीन है।

मानवीय सद्गुणों के पूर्णतः विकास, बच्चों के पालन पोषण, उनके चरित्र निर्माण, परिवार को दिशा व सन्मार्ग दिखाने, समाज के उत्थान व राष्ट्र के निर्माण में नारी की भूमिका अद्वितीय है, इसीलिए उसे समूची मानवता की धुरी कहा गया है, लेकिन दूसरी ओर इस तथ्य से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान तक धार्मिक अंधविश्वासों एवं सामाजिक जड़वत् परंपराओं के चलते स्त्री की स्थिति पुरुषों की तुलना में निम्न दर्ज़े की रही है। अतः उसे इस हीनता की दुर्दशा से उभारने व समाज के उत्थान व राष्ट्र निर्माण में समान भागीदार बनाने हेतु हमारे संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों यथा, 14,15,16,17,23,39,42, 51क(5) तथा 243 घ (1) व 243 न (3) में उनके उपबंध किए गए हैं, इन उपबंधों की भावना को चरितार्थ करने के निमित्त हमारी संसद द्वारा समय-समय पर विभिन्न अधिनियम भी पारित किए गए हैं, जो इस प्रकार हैं --

1. **बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1929 संशोधित 1978 :** 1978 में संशोधित इस अधिनियम के द्वारा 21 वर्ष से कम आयु के लड़के एवं 18 वर्ष से कम आयु की लड़की के विवाह पर प्रतिबंध है, अधिनियम की धारा 3 के अनुसार निर्धारित आयु से कम आयु में विवाह करने पर 15 दिवसों की जेल का प्रावधान है, धारा 4 के तहत यदि 21 वर्ष का पुरुष 18 वर्ष से कम आयु की लड़की से विवाह करता है तो उसे 3 माह की सज़ा व आर्थिक दंड का प्रावधान है, धारा 05 के अनुसार बाल विवाह को प्रोत्साहित करने व संपन्न कराने वाले को तीन माह की

सज़ा, इसी प्रकार धारा 06 के तहत बाल विवाह के लिए दोषी अवयस्क के संरक्षक अथवा माता-पिता को भी तीन माह की जेल का उपबंध है।

2. **कारखाना अधिनियम 1948, (संशोधित 1976) :** इस अधिनियम के अंतर्गत कारख़ानों में काम करने वाली नारियों की संख्या 30 से अधिक होने पर नियोक्ता द्वारा शिशु गृह (क्रेच) का प्रबंध किए जाने तथा धारा 79 के तहत स्त्रियों के लिए वर्तमान में 06 माह के मातृत्त्व अवकाश का प्रावधान है।
3. **बागान श्रम अधिनियम, 1951 :** यह अधिनियम बागानों में काम कर रही महिलाओं द्वारा अपने शिशुओं को स्तन-पान कराने हेतु लघु-अवकाश की व्यवस्था करता है।
4. **विशेष विवाह अधिनियम, 1954 :** इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी धर्म के अनुयायी भारतीय स्त्री-पुरुष अपनी स्वेच्छा से परस्पर विवाह कर सकते हैं अर्थात् इस अधिनियम के अंतर्गत भारतीय स्त्री को वैवाहिक स्वतंत्रता प्रदान की गई है कि वह किसी अन्य धर्मावलंबी पुरुष से स्वेच्छा से अपना विवाह न्यायालय में पंजीकरण द्वारा कर सकती है। इस अधिनियम के अंतर्गत विवाहित जोड़ों के व्यक्तिगत मामले जैसे तलाक़, गुज़ारा भत्ता, बच्चों की अभिरक्षा आदि इसी अधिनियम से विनियमित होते हैं।
5. **हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 :** यह अधिनियम सभी हिंदुओं जिनमें सिक्ख, जैन एवं बौद्ध सम्मिलित हैं पर विवाह के मामलों में लागू होता है जिसमें विवाह की अनिवार्य शर्त सप्तपदी का उल्लेख है, अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार कोई पुरुष अपनी पत्नी के जीवित रहते अथवा कोई भी स्त्री अपने पुरुष के जीवित रहते, विधिवत् विवाह-विच्छेद किए बगैर दूसरा विवाह नहीं कर सकते। ऐसा किए जाने पर सात वर्ष के कारावास एवं आर्थिक दंड अथवा दोनों दिए जाने का प्रावधान है।
6. **हिंदू दत्तक तथा भरण पोषण अधिनियम, 1956 :** इस अधिनियम में निःसंतान हिंदू पति-पत्नी द्वारा किसी दूसरे का बच्चा गोद लिए जाने तथा हिंदू पत्नी जो अपने पति के साथ रह रही हो, वह अपना भरण-पोषण प्राप्त करने के लिए पति के विरुद्ध न्यायालय में दावा कर सकती है।
7. **अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम, 1958 :** इस अधिनियम के द्वारा समाज में लड़कियों के क्रय विक्रय, वेश्यावृत्ति हेतु नारियों को उकसाना, उनका व्यापार करना इत्यादि को प्रतिबंधित किया गया है।
8. **समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 :** अधिनियम की धारा 4, समान कार्य के लिए महिलाओं को पुरुषों के समान वेतन का उपबंध करती है तथा धारा 5 के अनुसार एक समान प्रकृति के कार्य के लिए भर्ती प्रशिक्षण, पदोन्नति या स्थानांतरण आदि में स्त्रियों के विभेद को निषिद्ध करती है।

9. **अपराधिक कानून संशोधन अधिनियम, 1976 :** इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार यदि कोई व्यक्ति किसी औरत को मानसिक या शारीरिक रूप से प्रताड़ित करता है या उसे आत्म-हत्या के लिए प्रेरित करता है, तो उसके इस कृत्य को गंभीर मानते हुए 03 वर्ष की क़ैद एवं ज़ुर्माने का प्रावधान है।

10. **दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 : 1986 में संशोधित :** इस अधिनियम की धारा तीन के अनुसार दहेज लेने व देने वाले को 05 वर्ष की सज़ा का प्रावधान है।

11. **गर्भ चिकित्सा समापन अधिनियम 1971 :** इस अधिनियम के अंतर्गत कुछ विशेष परिस्थितियों में जब गर्भधारण करने वाली महिला की जान को ख़तरा हो अथवा गर्भ से होने वाले बच्चे के शारीरिक अथवा मानसिक रूप से विकलांग होने की संभावना हो, ऐसी स्थिति में पंजीकृत चिकित्सकों के इस कृत्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 312, 316 के तहत अपराधिक कृत्य नहीं माना जाएगा।

12. **अंतर्राज्यीय प्रवासी कर्मकार अधिनियम, 1979 :** इस अधिनियम में कुछ विशेष नियोजनों में नियोजित महिलाओं के लिए पृथक् शौचालयों एवं स्नानगृहों की व्यवस्था हेतु उपबंध किया गया है।

13. **महिलाओं का अशिष्ट रूपण अधिनियम, 1986 :** अधिनियम के अनुसार कोई व्यक्ति किसी ऐसे विज्ञापन का प्रसार न तो करेगा, न ही कराएगा अथवा ऐसे किसी प्रकाशन अथवा प्रदर्शन की व्यवस्था नहीं करेगा, न ही उसमें भाग लेगा जिसमें किसी प्रकार से महिलाओं का अशिष्ट रूपण अंतर्विष्ट हो। अधिनियम के उल्लंघन पर प्रथम बार दो वर्ष के कारावास व दो हज़ार का अर्थदंड तथा द्वितीय व पश्चात्वर्ती दोष सिद्धि की दशा में न्यूनतम 06 माह अधिकतम 05 वर्ष के करावास तथा दस हज़ार के ज़ुर्माने से दंडित किया जा सकेगा, अधिनियम के अंतर्गत होने वाला अपराध जमानतीय व संज्ञेय है।

14. **सती प्रथा निवारण अधिनियम, 1987 :** इस अधिनियम के अंतर्गत किसी विवाहित महिला के पति की मृत्यु होने पर उस महिला को अपने पति की चिता के साथ सती होने हेतु प्रेरित करना, सती प्रथा को महिमा मंडित करना, इस संबंध में उत्सव का आयोजन करना या सती होने देना आदि दंडनीय कृत्य है।

15. **घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 :** इस अधिनियम में उपबंधित किया गया है कि कोई भी महिला जो अपने पति, नातेदारों या पुरुष मित्रों से घरेलू हिंसा जिसमें शारीरिक हिंसा, यौन हिंसा, आर्थिक हिंसा, मौखिक व भावनात्मक हिंसा की शिकार है वह इस अधिनियम के तहत उपचार पा सकती है, अधिनियम के अंतर्गत पीड़ित महिला को घरेलू आवास का (वैवाहिक निवास में रहने का) संरक्षण प्रदान किया गया है, अधिनियम के अंतर्गत दोषी पाए गए व्यक्ति को एक वर्ष की सज़ा व 20 हज़ार रुपए का प्रावधान किया गया है।

16. **हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 2005 :** पुराने अधिनियमों को संशोधित करते हुए इस अधिनियम में प्रावधान किया गया है कि एक हिंदू स्त्री पिता अथवा पति की संपत्ति में बराबर की हक़दार है तथा महिलाएँ पिता की संपत्ति में अपने हक़ का कानूनी दावा कर सकती हैं।

महिलाओं के उत्थान हेतु हर तरह के संवैधानिक क़दम व कानूनी उपबंधों के बाबजूद भी उनकी स्थिति में अभी तक कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो पाया है, भारत की नारी विशेष रूप से ग्रामीण व कमज़ोर वर्ग की नारी आज भी अबला है, आज भी उसकी आँखों में पानी है, वह अपनी हैसियत एवं कर्त्तव्यबोध पर आज भी तरस खा रही है।

सर्वहारा वर्ग की वे महिलाएँ जो खेतों में फसल बोती व काटती हैं, जंगल में लकड़ी काटती हैं जो पशुओं का गोबर साफ़ कर कंडा पाथती हैं, जो बाँस के बर्तन बनाती व बेचती हैं, बीड़ी बनाती हैं, उन महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु यह संसदीय अधिनियम कोई मायने नहीं रखते न ही उनकी स्थिति परिवर्तन में कोई कारगर सिद्ध हुए हैं। कारण, थोथी व दक़ियानूसी सामाजिक मान्यताओं, धार्मिक अंधविश्वासों के चलते आज भी वह पति को अपना भगवान्, भाग्य विधाता व जीवन रूपी नैया का खेबनहार मानती हैं, वह पति व परिवार वालों द्वारा भूखों मारने, सताने व उत्पीड़ित करने पर भी उफ़् नहीं कहती। हर तरफ़ हाड़ तोड़ परिश्रम के बावजूद भी उनके हाथ कुछ नहीं रहता, जो कुछ कमाती है अपने पति व परिवार को अर्पित कर देती है। पति की सेवा, संतानोत्पत्ति व उसके भरण पोषण को जीवन का पावन धर्म मानती है, स्वयं अपनी ससुराल में भले ही भूखों मरती हो, लेकिन मायके में पिता की मृत्यु के बाद भाईयों से एक रुपए की उम्मीद नहीं करती। आवश्यकता अधिक संसदीय नियमों की नहीं अपितु सामाजिक बदलाव की है, जन जागरूकता कार्यक्रमों की है ताकि उसकी मानसिक स्थिति में बदलाव लाकर उसे परिवर्तनों को स्वीकार करने हेतु मानसिक रूप से तैयार किया जा सके।

❑

डॉ. अनुपमा यादव एवं डॉ. ऋतु व्यास

स्वतंत्रोत्तर भारत में पुलिस की भूमिका

भारत ही नहीं, बल्कि संसार के समस्त देशों में पुलिस का अस्तित्व प्राचीनकाल से चला आ रहा है। प्रत्येक सरकार से, चाहे वह किसी भी राजनीतिक दल की क्यों न हो अपेक्षा की जाती हैं कि वह देश में कानून और शांति व्यवस्था को बनाए रखे। पुलिस ही सरकार का मुख्य अंग है जो शांति और कानून व्यवस्था को कायम रखती हुई व्यक्ति को स्वतंत्र अस्तित्व और सुरक्षा प्रदान करती है। वास्तविक रूप से पुलिस ही व्यवस्थापक सभाओं और अदालतों के निर्णयों को क्रियान्वित कराती है।

15 अगस्त, 1947 में भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् देश में सांप्रदायिक, भाषाई और क्षेत्रीय मुद्दों को लेकर जो कानून और व्यवस्था की समस्याएँ उत्पन्न हुई, उनके कारण नई मान्यताओं और विचारों का सही ढंग से विकास न हो सका। विभाजन के दंगे, शरणार्थियों का आदान-प्रदान, हत्याओं और बिगड़ती शांति व्यवस्था की घटनाओं एवं देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, सीमा सुरक्षा तस्करी और आतंकी गतिविधियों ने पुलिस के सामने अनेक जटिल समस्याएँ पैदा कर दी हैं। सरदार वल्लभ भाई पटेल की दूरदर्शिता से सैकड़ों देशी रियासतों का केंद्रीय संघ में विलीनीकरण हुआ। अलग-अलग योग्यता, वेतन क्रमों की पुलिस को एक कड़ी में पिरोया गया। यह पुलिस प्रशासकों की सफलता की घोतक थी कि अल्प समय में ही पुलिस बलों को योग्यता स्तर पर ला खड़ा किया गया।

सन् 1951-52 के भारत के पहले प्रजातंत्रीय चुनावों में पुलिस को इसकी कार्यप्रणाली और व्यवस्था का नया अनुभव प्राप्त हुआ। प्रत्येक राज्य में पुलिस एवं प्रशासन के सुंदर तालमेल से चुनाव व अन्य व्यवस्थाएँ शांतिपूर्ण तरीके से संपन्न हुई। आजादी के बाद पुलिस से यह अपेक्षा की जा रही थी कि वह जनता से अच्छे संबंध बनाए किंतु क़दम-क़दम पर पुलिस को शासन के आदेशों से हिंसात्मक प्रदर्शनों और सांप्रदायिक दंगों को दबाने में बल का प्रयोग करने के लिए मज़बूर होना पड़ा। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल

नेहरू का कहना था कि संकट की घड़ियों में सांप्रदायिक, भाषा या प्रांतीय संबंधी अन्य किसी भी झगड़ों के समय पुलिस को अपनी भावात्मक, जातीय, धार्मिक अथवा किसी अन्य प्रकार की उत्तेजना के वशीभूत न होकर निष्पक्ष रहकर अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहिए।[1]

1947 में अग्रेजों की प्रभुसत्ता से प्राप्त स्वतंत्रता और 26 जनवरी, 1950 के संविधान के कार्यान्वित हो जाने से भारतीय समाज के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में उथल पुथल प्रारंभ हो गई। राजनैतिक स्तर पर भारत एक धर्म निरपेक्ष और लोकतंत्रात्मक गणराज्य घोषित किया गया। संविधान ने नागरिकों को समता, स्वतंत्रता, शोषण के विरुद्ध धार्मिक स्वतंत्रता, संस्कृति और शिक्षा संबंधी तथा संवैधानिक उपचारों के अधिकार प्रदान किए।[2]

देश में हुए राजनैतिक परिवर्तन, कृषि, आर्थिक और औद्योगिक उन्नति के साथ-साथ बढ़ते अपराध, भ्रष्टाचार और सुरक्षात्मक जिम्मेदारियों ने पुलिस और केंद्रीय पुलिस संगठनों की आवश्यकता पर जोर दिया। भारत के अनेक राज्यों द्वारा सन् 1958 से 1971 तक नियुक्त दस आयोगों ने पुलिस के कार्यो और उसके सुधार के प्रस्तावों का लेखा-जोखा किया। इन आयोगों ने पुलिस संबंधी उन्हीं समस्याओं को ही देखा जो सदियों से चली आ रही थी। अंत में भारत सरकार ने 1861 के पुलिस अधिनियम के आधार पर ही संगठित पुलिस बल को जन्म देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आज भी देश की वर्तमान पुलिस संरचना इस अधिनियम की बुनियाद पर खड़ी है।[3] साथ ही साथ भारत सरकार ने सन् 1977 में राष्ट्रीय पुलिस आयोग की स्थापना का निर्णय लिया।[4]

1 नवंबर, 1956 में नवीन मध्य प्रदेश गठन के पूर्व मध्य प्रदेश चार भागों मध्य भारत, भोपाल, मध्य प्रांत और विंध्य प्रांत में विभक्त था जिसका इतिहास सम्मिलित रूप से देखना आवश्यक है। मध्य प्रांत में पुलिस का गठन 1861 में किया गया था। लेफ्टिनेंट कर्नल टेलर को प्रथम इंस्पेक्टर जनरल पुलिस बनाया गया। तत्कालीन मध्य प्रांत में 135 थाने, 215 चौकी तथा जिला रिजर्व पुलिस बल तैनात थी।[5]

ब्रिटिश कानून जिस उद्देश्य से बनाया गया था आज के प्रजातांत्रिक युग में उसकी उपयोगिता पर प्रश्नचिह्न लग जाना स्वाभाविक है। अंग्रेजों ने अपने को न्यायप्रिय दिखाने के लिए साक्ष्य विधान में यह अवश्य लिख दिया था कि पुलिस न केवल अभियोजित करती है बल्कि प्रताड़ित भी करती है और इसलिए पुलिस को दिया गया बयान न्यायालय में सिद्ध नहीं किया जा सकता।[6]

भारतीय पुलिस प्रशासन का संगठनात्मक इतिहास जानने के लिए निम्न पुलिस संगठनों एवं आयोगों का संरचनात्मक ढांचा जानना आवश्यक है।

1. केंद्रीय पुलिस संगठन
2. राष्ट्रीय पुलिस आयोग

केंद्रीय पुलिस संगठन

सन् 1861 के पुलिस एक्ट ने संगठित पुलिस बल को जन्म देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है आज भी सन् 1861 के पुलिस एक्ट के अंतर्गत ही पुलिस संगठन पूरे भारत में कर्त्तव्यरत् हैं।[7] हमारा देश संघात्मक प्रणाली पर कार्य करता है, जिसका अर्थ है कि केंद्र राज्य सरकार की प्रशासनिक प्रणाली अपने आप में स्वतंत्र रूप से कार्य करती है।[8] भारतीय संविधान के अनुसार राज्यों में अपराधों की रोकथाम, शांति एवं कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए पुलिस व्यवस्था की जिम्मेदारी राज्यों की सरकारों की है, पुलिस का संचालन राज्य विषय है। यद्यपि पुलिस का गठन राज्य स्तरीय आधार पर किया गया है परंतु भारतीय संविधान में केंद्र पर भी पुलिस संबंधी अनेक जिम्मेदारियाँ डाली गई हैं। उनको पूरा करने के लिए केंद्र ने अनेक एककों का संगठन किया। तब से अब तक भारत की सुरक्षा और शांति व्यवस्था में केंद्रीय पुलिस संगठन अपनी भूमिका निभा रहे हैं।

केंद्रीय पुलिस संगठन विभिन्न अंगों में अपने-अपने कार्यकलापों के अनुसार बँटा हुआ है। इसमें मुख्यता केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल, सीमा सुरक्षा बल, केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल, रेलवे सुरक्षा बल, भारत तिब्बत सीमा बल, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, असम राइफल्स तथा केंद्रीय अपराध विज्ञान प्रयोगशाला आदि। अनेक केंद्रीय पुलिस संगठन जो स्वतंत्रता से पूर्व नाम मात्र थे आज सारे देश में सर्वव्यापी और आवश्यक अंग माने जाने लगे हैं। ये सब देश के कोने-कोने में फैले हुए अपने कार्यो को दक्षता से निभा रहे हैं।

दिल्ली पुलिस कमीशन ने कहा है -- ''हम पुलिस संगठन के मुख्य केंद्र बिंदु सिपाही को चाहें जिस दृष्टिकोण से देखें, यह आवश्यक है कि उसे अच्छे व्यक्तित्व वाला, पढ़ा लिखा, होशियार, चुस्त अपने कार्य में दिलचस्पी लेने वाला, अच्छी न्यायिक बुद्धि, क्षमता और हिम्मत वाला होना चाहिए।[9]

राज्यों की पुलिस बलों के प्रशिक्षण, आधुनिकीकरण तथा अन्य सहायता देने का दायित्व केंद्रीय सरकार पर है। राज्यों और केंद्रीय पुलिस संगठनों में समन्वय तथा अन्य पुलिस संबंधों और समस्याओं के समाधान के लिए ग्रह मंत्रालय, भारत सरकार राज्यों के महानिरीक्षकों और अन्य वरिष्ठ अधिकारियों की बैठकें समय-समय पर करता रहता हैं। पुलिस संबंधी महत्त्वपूर्ण निर्णय मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में लिए जाते हैं। संघीय सूची की धारा 7 के अनुसार पुलिस प्रशिक्षण एवं अपराधों की खोज में वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहायता देना केंद्रीय विषय है। पुलिस के अधिकारियों ने अनेक पुलिस संबंधी विषयों के प्रशिक्षण हेतु केंद्र ने राष्ट्रीय पुलिस अकादमी तथा अन्य संस्थाएँ खोली। भारत

सरकार द्वारा दिल्ली स्थापित अपराध विज्ञान प्रयोगशाला और कलकत्ता स्थित केंद्रीय अंगुली छाप ब्यूरो जैसे संगठन राज्यों के पुलिस अधिकारियों को बराबर प्रशिक्षण दे रहे हैं। संघीय सूची की प्रविष्टि संख्या 2 के अनुसार आपातकालीन स्थिति तथा दंगों में केंद्र सरकार अपनी अर्धसैनिक बलों जैसे सीमा सुरक्षा बल, केंद्रीय सुरक्षा बल और भारत तिब्बत सीमा बल से राज्यों को सहायता देता है। समय-समय पर केंद्र सरकार अखिल भारतीय पुलिस खेल-कूद एवं अन्य सेवा सम्मेलनों का आयोजन करता रहती है।

भारतीय संविधान द्वारा सौंपी गई जिम्मेदारियों को निभाने के लिए केंद्र ने निम्नलिखित पुलिस बलों का गठन किया --

1. केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (सी.आर.सी.एफ.)
2. सीमा सुरक्षा बल (बी.एस.एफ.)
3. केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सी.आई.एस.एफ.)
4. रेलवे सुरक्षा बल (आर.पी.एफ.)
5. भारत तिब्बत सीमा पुलिस (आई.टी.पी.)
6. असम राइफल्स

उपरोक्त अर्ध सैनिक पुलिस बलों के अलावा अन्य केंद्रीय पुलिस संगठन भी है --

(i) आम सूचना ब्यूरो (आई.बी.)
(ii) केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सी.बी.आई.)
(iii) पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (बी.पी.आर.डी.)
(iv) राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो
(v) राष्ट्रीय पुलिस अकादमी
(vi) केंद्रीय अपराध प्रयोगशाला

केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल

क्राउन पुलिस जुलाई 1939 में बनाई गई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1949 में इसका नाम बदल कर इसे केंद्रीय रिजर्व पुलिस नाम दिया गया। 19 मार्च, 1950 को इसे राष्ट्रीय ध्वज प्रदान किया गया था। केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल अधिनियम, 1949 के अधीन बनाया गया था और यह ग्रह मंत्रालय भारत सरकार के अधीन कार्य करता है। बल के प्रबंध और पर्यवेक्षण के मार्ग निर्देशन के लिए मंत्रालय द्वारा 1955 में नियम बनाए गए। इस बल को बनाने का उद्देश्य भारतीय राज्यों को सुरक्षा प्रदान करना और उन्हें राजनीतिक कठिनाईयों से बचाना था।

इस बटालियन का गठन मध्य प्रदेश राज्य के नीमच स्थान पर किया गया। इसे सर्वप्रथम क्राउन रिप्रजेंटेटिव पुलिस के नाम से जाना गया । यहाँ पर हरियाली भरी

पहाड़ियों व प्रशिक्षण की दृष्टि से खुले मैदानों की सुविधा थी। इसलिए प्रांतीय सरकार राजपुताना मालवा पर निगरानी करने हेतु अंग्रेजों ने नीमच को ही चुना। राजपूताना के रेजीडेंट के पुलिस सलाहकार इस बल के निरीक्षक थे। इस बल के जवान देशी राज्यों के कानूनों की परिधि से बाहर थे। जब दूसरा महायुद्ध हुआ तो 1942 से 1944 में इस बल को सिंध प्रदेश में अनेक बार गैर-सैनिक प्रशासन की सहायता हेतु कार्रवाईयाँ करनी पड़ी। इसका उपयोग विशेष तौर पर उपद्रवों को खत्म करने हेतु किया गया व कई देशी राज्य जहाँ राजनैतिक आंदोलन सक्रिय थे; उन्हें दबाने के लिए इसकी टुकड़ियों को भेजा गया।

शुरूआती कानून व्यवस्था को बनाए रखने में प्रांतीय सरकारों को सहायता देने के लिए इस हरफन मौना दल की उपयोगिता और उच्च संभावनाओं को भारत के तत्कालीन गृह मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने अतीव दूरदर्शिता से पहचाना व इसे केंद्रीय रिजर्व पुलिस का नाम दिया। समाज को एकजुट बनाए रखने के लिए रिजर्व पुलिस की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। सन् 1948 से इसकी बटालियन संख्या में वृद्धि हुई व 1956, 1957, 1960 तक इसकी संख्या दस बटालियन तक हो गई। नीमच में केंद्रीय प्रशिक्षण महाविद्यालय प्रारंभ होने से विभिन्न राज्यों में इस बल की और माँग बढ़ गई व 1965 तक इसकी संख्या 24 बटालियन हो गई व इसकी उपयोगिता के कारण निरंतर वृद्धि होती गई। सन् 1978 तक इसकी संख्या 60 बटालियन की थी। परिचालन की दृष्टि से देश को चार सेक्टरों और 11 रेंजों में विभाजित किया गया। प्रत्येक सेक्टर का मुख्याधिकारी महानिरीक्षक और रेंज का अधिकारी उप-महानिरीक्षक पद का अधिकारी नियुक्त किया गया।

केंद्रीय रिजर्व पुलिस का गठन अर्द्धसैनिक बल के समान ही किया गया है। इन्हें पंजाब, नागालैंड, भारत और पाकिस्तान सीमा और बंगला देश सीमा पर भी लगाया गया है। यह बल प्रदेश की पुलिस सहायता के लिए तुरंत भेजा जाता है। इस बल के कार्य निम्नानुसार है --

1. सीमाओं की रक्षा करना
2. प्रदेश की कानून व्यवस्था बिगड़ने पर सहायता करना।
3. उग्रवादियों के विरुद्ध कार्यवाही करना।

केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल सबसे पुराना अर्द्धसैनिक बल है जिसने सीमा सुरक्षा, आंतरिक सुरक्षा, औद्योगिक सुरक्षा, राजद्रोह संघर्ष, उग्रवाद, आतंकवाद कई विनाशकारी घटनाओं से निपटना तथा सेना के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर शत्रु से लोहा लेने जैसे विविध भार उठाए। उत्तरदायित्वों का क्षेत्र बढ़ने से सीमा सुरक्षा बल भारत तिब्बत सीमा पुलिस,

केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल, राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड जैसे बलों का निर्माण हुआ व उनके कार्यक्षेत्र बाँटे और सुनिश्चित किए गए।

आज के युग में पुलिस की छवि ज्यों-की-त्यों है यहाँ तक कि भारत के स्वर्णिम काल के गुप्तकाल में भी कालिदास ने अपने 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' में पुलिस वाले (राजमह) को लालची और मारने वाला बताया है। मुगलकाल और ब्रिटिश काल में तो शासकों का उद्देश्य जनता को डरा, दबाकर रखने का था, इसलिए पुलिस और जनता के संबंधों का सही मूल्यांकन ही नहीं किया जा सकता।[10]

मध्य प्रदेश में पुलिस बल के आधुनिकीकरण के लिए अनेक योजनाएँ क्रियान्वित की गई हैं। अपराध और अपराधियों का रिकॉर्ड रखने के लिए भोपाल में 'पुलिस कंप्यूटर' की स्थापना 15 अप्रैल, 1982 को की गई।[11]

राष्ट्रपति श्री जैल सिंह ने केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के 47वें वार्षिकोत्सव हेतु आने पर अपने संदेश में कहा था, केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की मान्यताएँ एवं परंपराएँ इतनी सुदृढ़ है कि प्रतिकूल परिस्थितियों में भी इसके जवान अद्वितीय साहस का परिचय देते रहे हैं। आज देश की बढ़ती हुई माँग ने यह सिद्ध कर दिया कि बल के जवान अपनी कर्त्तव्य साधना की कसौटी पर खरे उतरे हैं। इस बल ने राष्ट्र की एकता और अखंडता को कायम रखने में बहुत ही रचनात्मक भूमिका निभाई है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने 1985 में ग्रुप केंद्र की परेड के अवसर पर अपने भाषण में कहा था, ''यह केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल का उत्तरदायित्व है कि शांति बनी रहे और विकास सुनिश्चित हो सकें, यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि बल को अपनी भूमिका का निर्वाह करने के लिए उपयुक्त आधुनिक हथियार उपलब्ध कराए जाएँ।

वर्तमान सामाजिक परिवेश में जनता के प्रति पुलिस का व्यवहार एक महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। जनता से पुलिस व्यवहार का अर्थ है कि पुलिस जनता से इस तरह से आचार व्यवहार करे कि पुलिस को अपना कर्त्तव्य पालन करने में जनता का हर प्रकार से सहयोग प्राप्त हो।[12]

लॉर्ड ब्राइस के अनुसार, ''कानून का सम्मान तभी होता है जब वह निर्दोष व्यक्तियों की रक्षा के लिए ढाल बन जाता है और प्रत्येक निजी अधिकार का संरक्षक बन जाता है। यदि कानून बेईमानी से लागू किया जाता है तो इसका आशय यह हुआ कि इसका सत्व ही नहीं रह गया... क्योंकि अपराधी दंड की कठोरता की अपेक्षा दंड मिलने की निश्चितता से दबते हैं। यदि न्याय का दीपक अँधेरे में बुझ जाये तो अँधेरा कितना गहन होगा।''[13]

❑

संदर्भ

1. एच. भीष्मपाल, भारत में केंद्रीय पुलिस संगठन एक सर्वेक्षण, पुलिस अनुसंधान एवं विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 18
2. वसु दुर्गादास, भारत का संविधान, एक परिचय, पृ. 86
3. मिश्र शरदचंद्र, पुलिस संगठन और प्रशासन, पृ. 75
4. मध्य प्रदेश पुलिस ऐतिहासिक विवेचन, नवभारत दैनिक समाचार पत्र, दिनांक 5 मई, 2001, पृ. 4
5. पाराशर डॉ. राजेंद्र, पुलिस एक्ट एडमिनिस्ट्रेशन, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, वर्ष 1986, पृ. 23
6. श्रीवास्तव डॉ. अंबरीष कुमार, पुलिस और समाज, राजधानी लॉ हाऊस, भोपाल, पृ. 102
7. भटनागर सतीश चंद्र, पुलिस प्रशासन एवं संगठन, सुविधा लॉ हाऊस, भोपाल, 2000, पृ. 17
8. भटनागर सतीश चंद्र, पुलिस प्रशासन एवं संगठन, सुविधा लॉ हाऊस, भोपाल, 2000, पृ. 24
9. दुबे रमेश प्रसाद, विकासशील समाज और पुलिस, सर्विसेज पब्लिशिंग हाऊस, भोपाल, 1978, पृ. 67
10. श्रीवास्तव डॉ. अम्बरीष कुमार, पुलिस और समाज, राजधानी लॉ हाऊस, भोपाल, 1995, पृ. 104
11. पाल डॉ. एन.सी., क्राइम कॉज एंड क्योर, वर्ष 1963, पृ. 47.
12. श्रीवास्तव डॉ. अम्बरीष कुमार, पुलिस और समाज, राजधानी लॉ हाऊस, भोपाल, 1995, पृ. 111
13. नंदलाल, राजनीति विज्ञान, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, इंदौर, 2014, पृ. 172

Dr. Dinesh Kumar Singh

Scope of Women Empowerment in Indian Law

Woman is the best gift of Almighty on earth. She is the creator, up bringer, preserver and protector of a family. But women have not been given their due even today by male dominated society. So we call for women empowerment. If women are discriminated or they are not given proper place, life will not move further and consequently, society will suffer. So there is a dire need to correct the machineries and take all possible means to address the women cause. Women have always been the subject of discrimination by the men to whom she kept in her womb for nine months. This discrimination is being observed from thousands of years.

For societal progress, it is inevitable to take all efforts and measures for women welfare by the States and the governments. This is known as women empowerment. It is immoral and illegal to treat women as a lesser equal entity. So to deny women or deprive her of political, social, economic, and cultural rights is a gross violation of the constitution, the supreme law of the land, and is also contempt of numerous international human rights declarations, covenants and conventions to which India is a member.

The scope of women empowerment is well provisioned in Indian Constitution in different parts starting from Preamble to Fundamental Rights to Fundamental duties to Directive Principles of State Policy and under other statutes as well.Women empowerment is a worldwide phenomenon, because women, almost in each country, have been subject of discrimination to some extent. So it is need of time to make best efforts for the betterment of women by all segments of society to establish egalitarian society. Women actually represent one half of the human population but the other half considers it its duty to control and regulate the body and mind of the first half.

In ancient Vedic times, women and men were considered equal as

for as education and religion were concerned. During that period, social status of women was strong enough. Women was supposed and considered as a Goddess named as Saraswati(Learning), Lakshmi (Wealth), and Parvati (Power). But after Vedic era and with the onslaught of the foreign invasion and subsequent rigidity of the caste system, women lost their independence and became ‘object’ requiring male protection.

Indian Constitution gives opportunity of equality to women and casts duty on Governments to adopt measures of positive discrimination in favour of them. Because of social discrimination from ancient times, our constitution, our laws, development policies, plans and progammes have aimed to provide advantage to the women in different spheres. India is the active player in international arena and consistently taking all its efforts to ensure the women empowerment. In this direction, India has ratified various international conventions and human rights instruments committing secure equal rights of women. In this direction, ratification of the Convention on Elimination of all forms of Discrimination against Women (CEDAW) is an important instrument.

There are various provisions in Constitution of India and under different statutes which mention the scope of women empowerment. Indian Constitution not only grants equality to women but also empower the State to adopt measures of positive discrimination in favour of women for neutralizing the cumulative socio-economic, education and political disadvantages faced by them. To address these problems, Indian Constitution lays down Articles 14, 15, 15(3), and 16.

Article 14 embodies the general rule of equality and other remaining provisions of fundamental rights are mere its examples of exemption. Women are historically and otherwise a weaker section of society for whose benefit Article 15(3) is made, which should be given widest possible interpretation and application subject to the condition that reservation should not exceed 50 percent[1]. In one of its important decisions, SC upheld an order of Odissa government reserving 30 percent quotas for women in the allotment of 24 hours medical stores as part of self–employment scheme[2]. Similarly, reservation of 50 percent seats for women teachers in the selection of primary school teachers in UP was upheld[3].

Article 15(3) of Indian Constitution enacts that "nothing in article shall prevent the State from making any special provision for women and children". But general rule is given under article 15(1) which says that "the State shall not discriminate against any citizen on ground only of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them. But rule given under article 15(3), as special provision for women and children are permissible. Thus, it is no violation of Article 15(1) if instructions are set up by State exclusively for women or places are reserved for women at public entertainments or in

public conveyances. In **Yusuf Abdul Aziz vs. State of Bombay**[4], the special position assigned to women in regard to the offence of adultery was upheld under this clause. In the same way, section 354 of Indian Penal Code is also valid. In Article 16, equal opportunities are given to all without any discrimination in public employment.

Article 39(b), 39(c) and 42 of part IV of the Constitution are also very important for women empowerment. Under this part, States are under obligation to govern and make policies in a specific manner as dictated by this and proceed towards the establishment of egalitarian society. According to article 39(a), it is the duty of State to secure the equality of right to livelihood for every men and women. Further, article 39(d) directs the State to provide equal pay for equal work for both men and women. Article 42 mentions social security just and humane conditions of work and for maternity relief.

Part IV of Indian Constitution contain one of the peculiar provisions related to fundamental duties of citizen. Women empowerment finds its place in this part also[5].

In the direction of betterment of women interest, certain amendment has been made. These are as under:

1. Not less than one third of the total number of seats to be filled by direct election in every Panchayat to be reserved for women and such seats to be allocated by rotation to different constituencies in a Panchayat[6]
2. Not less than one third of the total number of offices of chairpersons in the Panchayats at each level to be reserved for women[7].
3. Not less than one third of total number of seats to be filled by direct election in every municipality to be reserved for women and such seats to be allocated by rotation to different constituencies in Municipality[8].
4. Reservation of offices of chairpersons in Municipalities for SC and ST and women in such manner as the legislature of State may by law provide[9].

Apart from above Constitutional directions in favour of women, there are several other legal provisions in different statutes which provide the safeguard to women. In IPC following provisions are important for women protection:

1. Rape[10],
2. Kidnapping and abduction for different purposes[11],
3. Homicide for dowry death or other attempts[12],
4. Torture both mental and physical[13],
5. Molestation and sexual harassment[14]

To promote and secure the women's interest, following enactments are also important:

1. The Employees State Insurance Act,1948
2. Family Court Act, 1984
3. The Special Marriage Act,1954
4. The Hindu Marriage Act,1954
5. The Hindu Succession Act, 1956
6. Immoral Traffic (Prevention) Act, 1956
7. The Maternity Benefit Act, 1961
8. Dowry Prohibition Act, 1961
9. The Medical Termination of Pregnancy Act, 1971
10. The Factory Act, 1948
11. Mines Act, 1952
12. Indecent Representation of Women (Prevention) Act, 1986
13. The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005

The enactment of **'The National Commission for Women Act, 1990'** is a big step for the promotion of women interests and their protection in all respects.

Besides above Constitutional and statutory provisions for strengthening women interest, there are distinct and separate Ministry at Centre and State level both[15].

In India, a historical step was taken in 2005 through an amendment in Hindu Succession Act, 1955, where daughters are put at par with sons in paternal property. But it is notable that only law cannot change the whole thing. We have to change our mindset towards women. Law is an instrument to change the society but it cannot change our mindset regarding women's empowerment.

It can be said that women friendly laws are many, but its implementation is tough, so implementing machinery should be carefully reviewed and required action must be taken. Prime Minister of India has launched a historical programme, **Beti Bachao, Beti Padhao**. It is the nice example regarding the importance of woman.

In the light of above discussion, we may infer some suggestions as under:

1. It is desirable to change the mindset of general people regarding the implementation of welfare schemes of women. This may be possible by imbibing moral contents into the minds of general people by teaching and organizing camps in village and Mohalla level.
2. It is necessary to strengthen Women Commission through vesting magisterial powers like courts in case of women atrocities or domestic

violence.

3. In case of female feticides and illegal sonography for identification of child, strict law should be made and heavy penalty imposed on such clinics. So present law should be amended to sharpen the penal tools in this regard.
4. Women Sarpanch and other female members or official members of local bodies be given fair chance and suitable environment for taking their own decisions without interference of their husbands or any other male members.
5. It should be made mandatory for all schools up to class VIII standard that teaching staff will be only females.
6. Women Reservation Bill ensuring 33 percent quota in all Legislative Assemblies should be passed by Parliament. This should be completed by making consensus among all national political parties.
7. It is the need of the time that more and more women who are on high post and reputed come forward to raise the cause of their sisters who have not been able to get justice or opportunity due to certain reasons.

❑

Refrences

1. This limit has been imposed by Supreme Court in the case of Indira Sawhney v Union of India, AIR 1993SC 477.
2. Gaytri Devi Pansari v State of Orissa (2000)4SCC 221
3. Rakesh Kumar Gupta v State of UP (2000)5SCC 172.
4. AIR 1954 SC 321.
5. According to article 51A(e), it is the duty of State to spread harmony and the spirit of common brotherhood amongst all the people of India and to renounce practices derogatory to the dignity of women.
6. Article 243D(3) of Constitution of India.
7. Article 243D(4) of Constitution of India.
8. Article 243T(3) of Constitution of India.
9. Section 498 of Indian Penal Code.
10. Section 376 of IPC,1860
11. Section 363 to 373 of IPC
12. Section 302,304B of IPC
13. Section 498A of IPC
14. Section 354 and 509 of IPC.
15. In 2001, the Department of Women and Child Development has prepared a 'National Policy for the Empowerment of Women'.

प्रो. नीता बोरा शर्मा

महिला सशक्तिकरण और अधिकार
(उत्तराखंड राज्य में महिला सशक्तिकरण की स्थिति का एक अध्ययन)

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने आज़ादी के बाद स्वीकारा था कि मानवीय गरिमा की स्थापना के लिए लैंगिक असमानता को दूर किया जाना आवश्यक है। संविधान निर्माताओं ने भी महिला अधिकारों एवं समानता हेतु संविधान में विशेष प्रावधान किए। कानून के समक्ष समानता, महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा, लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता, समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, समान कार्य के लिए समान वेतन आदि लैंगिक समानता की स्थापना का प्रयास किया गया है।

उस सबके बावजूद 'स्टेटस ऑफ वीमेन इन इंडिया' समिति ने 1974 में जब रिपोर्ट प्रस्तुत की तो स्पष्ट किया गया -- 'सरकारी नीतियों, कार्यक्रमों और योजनाबद्ध विकास के बावजूद सभी महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में महिलाएँ पिछड़ी हुई हैं -- संपत्ति और आर्थिक अधिकारों से वंचित हैं, तथा हर स्तर पर लैंगिक भेदभाव, उपेक्षा और हिंसा की शिकार हैं। 1975 का वर्ष अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया। 1975 से 1985 का दशक 'महिला दशक' के रूप में मनाया गया। 2001 का वर्ष भारत में महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित कया गया। निरंतर महिला विकास हेतु विविध योजनाओं एवं कानूनों का निर्माण होता रहा है।

स्त्रियों और पुरुषों के बीच समता को बढ़ावा देने और स्त्रियों की प्रस्थिति को सुधारने की प्रेरणा संयुक्त राष्ट्र की मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा से प्राप्त हुई जिसने ग़ैर-भेदभाव की एक समानता की स्थापना की। भारतीय संविधान भी संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्रों में वर्णित अधिकारों के अनुरूप बिना किसी भेद-भाव के सभी स्त्री एवं पुरुषों के लिए समान रूप से अधिकारों का उपबंध करता है। भारतीय संविधान का भाग-3 एवं भाग-4 क्रमशः मूल अधिकारों एवं राज्य के नीति-निर्देशक तत्त्वों की व्यवस्था करता है जो सार्वभौमिक घोषणा में वर्णित अधिकारों से पर्याप्त साम्य रखते हैं एवं इसे

भारत के उच्चतम न्यायालय ने अपने कई फैसलों में समय-समय पर उद्धृत किया है। इन निर्णयों के जरिये उस लोकतांत्रिक भावना को पुष्ट करने का प्रयास किया गया है जो वास्तविक रूप से सामाजिक न्याय के प्रवर्तन में सहायक है और जो किसी भी प्रगतिशील राष्ट्र का अनिवार्य लक्षण भी हैं।

अधिकार एवं कानूनों में गहरा संबंध होता है। किसी व्यक्ति या समुदाय को अधिकार कानूनों के जरिये मज़बूत किए जाते हैं। जैसे पंचायतों में महिलाओं के प्रतिनिधित्व एवं हक़ की बात सोची गई, तभी सोच को क्रियान्वित करने के लिए सरकार ने कानून बनाकर पंचायती राज में महिलाओं के लिए आरक्षण लागू किया।

आज महिला सुरक्षा हेतु विविध कानून बने हैं। दहेज और हिंसा से संबंधित कानून कड़े करने के बाद भी महिलाओं के विरुद्ध अपराधों का प्रतिशत बढ़ा ही है। कन्या भ्रूण हत्या रोकने के कानून के बावजूद भी भ्रूण हत्या हो रही हैं, घरेलू हिंसा में भी रोक नहीं लग पाई। कार्यस्थलों पर शोषण, अपहरण, छेड़छाड़, मारपीट, पारिवारिक उपेक्षा जारी ही है। 2011 के आँकड़ों को देखें तो प्रति हज़ार लड़कों में लड़कियों की संख्या 918 हो गई जो 1991 में 945, 2001 में 927 थी जो चिंतनीय हैं।

पैलिनीथूराई के शब्दों में "महिला सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज के विकास की प्रक्रिया में राजनीतिक संस्थाओं के द्वारा महिलाओं को पुरुष के बराबर मान्यता दी जाती है। यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः ही हो जाएगा। 'येनिसा ग्रिफेन' ने पैसेफिक कार्यशाला के दौरान सशक्तिकरण को परिभाषित करते हुए कहा, सशक्तिकरण से मेरा तात्पर्य सामान्य अर्थों में स्त्री का शक्ति के साथ जुड़ाव होना है। शक्ति से मेरा तात्पर्य है, तुरंत नियंत्रण प्राप्त करना, जो हम कह रहे है उसे सुना जाए, स्त्री को स्त्री के क्षेत्र में ही परिभाषित किया जाए एवं सामाजिक इच्छाओं में प्रभावकारी भूमिका और सामाजिक निर्णयों को प्रभावित किया जाए।

महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में भारत में प्राचीन काल से ही प्रयास होते रहे है, जो वर्तमान समय में भी क्रियान्वित है। महिला सशक्तिकरण जैसे शब्द का प्रयोग तो वैदिक काल में नहीं किया गया था किंतु दंपत्ति शब्द का प्रयोग होता था। शाब्दिक रूप से इसका अर्थ था कि घर पर स्त्री और पुरुष दोनों का समान अधिकार है। यही विचार अवस्था में भी देखने को मिलते है। ऋग्वेद में और यहाँ तक कि गृह सूत्र में भी इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि महिलाओं को धार्मिक क्रियाकलापों में सम्मानजनक स्थिति प्राप्त थी। महिलाओं को पुरुषों की भाँति सभी प्रकार के संस्कारों और क्रियाकलापों में भाग लेने का समान अवसर तो था ही, साथ ही कभी-कभी पति की अनुपस्थिति में पत्नी इस कार्य को अकेले भी कर सकती थी।

इतिहास साक्षी रहा है कि स्वतंत्रता पूर्व से कई महान् व्यक्तियों ने महिला सशक्तिकरण के लिए आवाज़ उठाई है। महिला सशक्तिकरण की शुरुआत 19वीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलन के साथ मानी जा सकती है जिसके अग्रदूत राजा राममोहन राय थे। उनके प्रयासों के परिणामस्वरूप ही 1829 में 'सती प्रथा' के विरुद्ध कानून पारित हुआ। ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों से जुलाई 1856 में 'हिंदू विधवा पुनर्विवाह' को कानूनी अनुमति प्राप्त हुई। परिणामस्वरूप प्रथम विधवा विवाह कालिंदी देवी का पंडित रामचंद्र विद्या रतन से हुआ। 1872 में केशवचंद्र सेन के प्रयत्नों से 'नेटिव मेरिज एक्ट' पास हुआ जिसमें बहु-विवाह को दंडनीय अपराध माना गया और बाल विवाह निषेध ठहराया गया तथा अंतर्जातीय विवाह को मान्यता दी गई। स्वामी दयानंद सरस्वती एवं स्वामी विवेकानंद इत्यादि अनेक समाज सुधारकों ने भी नारी की स्थिति में सुधार तथा नारी अधिकारों के क्रियान्वयन एवं प्राप्ति हेतु उल्लेखनीय प्रयास किए। 1875 तक कलकत्ता, मद्रास एवं मुंबई विश्वविद्यालयों में लड़कियों के प्रवेश की अनुमति नहीं थी। पंडित रमाबाई द्वारा हंटर कमीशन के सम्मुख स्त्री शिक्षा की माँग रखी गई। इन्हीं के प्रयासों के परिणामस्वरूप ही 'कादम्बिनी बसु' को प्रथम महिला स्नातक होने का गौरव प्राप्त हुआ। 1888 में आनंदी बाई प्रथम महिला थी जो विद्या अर्जन के लिए विदेश गई। स्वर्ण कुमारी ने प्रथम महिला संपादक के रूप में 'भारती पत्रिका' का संपादन किया।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला सशक्तिकरण के लिए किए गए कुछ प्रयासों में 1840 में संयुक्त राज्य अमेरिका में लुक्रीशिया ने समान अधिकार संगठन की स्थापना करके नीग्रो महिलाओं के समान अधिकारों की माँग की। अमेरिका में ही 8 मार्च, 1857 को न्यूयॉर्क के सिलाई और वस्त्र उद्योग में कार्यरत् महिलाओं ने पुरुषों के समान वेतन एवं 10 घंटे के कार्य दिवस के निर्धारण हेतु हड़ताल की थी जिस कारण इस दिवस को विश्व भर में 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस' के रूप में मनाया जाता है। 1859 में सेट पीटर्स वर्ग (सोवियत संघ) में महिला मुक्ति आंदोलन का सूत्रपात हुआ था। 1859 में अमेरिका में राष्ट्रीय महिला मताधिकार संगठन तथा 1882 में फ्रांस में महिला अधिकार संगठन की स्थापना की गई। महिलाओं को पहली बार मत देने का अधिकार न्यूजीलैंड में 1893, नार्वे में 1893, फ्रांस में 1936, इटली में 1945 को प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त, 1951 में 'अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन' ने महिलाओं को पुरुषों के समान वेतन दिलाने हेतु समान श्रम के लिए समान वेतन संबंधी प्रस्ताव तथा 1952 में संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों का प्रस्ताव पारित किया। 1975 में कोपेनहेगन में पहला, 1985 में नैरोबी में दूसरा तथा 1995 में शंघाई में तीसरा अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन आयोजित किया गया। इन सबसे विश्व स्तर पर महिला सशक्तिकरण को बल मिला।

समाज में नारी को केंद्र में रखकर लंबे समय से बहस होती रही है लेकिन मौजूदा

उपभोक्तावाद और भीषण अर्थवाद के युग में इस बहस की सार्थकता निश्चित रूप से बढ़ी है, समाज की बदलती सोच के अनुरूप स्त्री से जुड़े सवाल आज नये रूप में जवाब माँग रहे है। वस्तुतः आज नारी की भूमिका में ज़रूर बदलाव आया है लेकिन स्थिति बहुत ज़्यादा परिवर्तित नहीं हुई है। उत्तराखंड में महिलाओं ने न केवल समाज में अपना स्थान बनाया अपितु समाज को एक नई दिशा प्रदान करने का कार्य भी किया।

देव भूमि उत्तराखंड की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय विशिष्टताओं के फलस्वरूप यहाँ के निवासियों की जीवन शैली अन्य राज्यों से भिन्न है। पर्वतीय क्षेत्रों की महिलाओं की दिनचर्या बहुत ही कठिन एवं चुनौतीपूर्ण है जिसकी शुरुआत परिवार हेतु जल संग्रह व मवेशियों हेतु चारा एवं रसोई के लिए ईंधन के प्रबंध से जुड़े ताने-बाने में बँधी हुई है। यह परिस्थितियाँ महिलाओं को जीवट, साहसी एवं परिश्रमी बनाती है। महिलाएँ भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार ढलकर यहाँ के पहाड़ों, नदियों एवं वनों सें तादात्म्य बैठाती है। उत्तराखंड में महिलाएँ समाज की रीढ़ हैं। उसे प्रातः काल से संध्या समय तक घर और बाहर के अनेक कार्य करने होते हैं। सबेरे ही वह गौशाला में जाकर दूध दूहकर उसकी सफाई इत्यादि करती है। गाँव से दूर जल स्रोत से पानी भर कर लाना, फिर कलेवा रोटी तैयार कर परिवार के वृद्धों तथा बच्चों को नास्ता कराती है। खेत में हल चला रहे पति या अन्य पारिवारिक सदस्य के लिए कलेवा रोटी लेकर जाती हैं। खेत में ढेले तोड़ने तथा खेत के किनारों को खोदने के साथ ही उसे घर में बँधे गाय-बछड़ों के लिए घास-चारे की व्यवस्था भी करनी होती है। आर्थिक विषमताओं के कारण पुरुष प्रवासी बनता है और स्त्री परिवार के संपूर्ण बोझ को संभालती हैं।

इतना कष्ट श्रम करने के बाद भी उसका कार्य अलाभकर ही साबित होता है। उसके श्रम का मूल्य पुरुषों के श्रम से कम आँका जाता है, यहाँ तक कि यदि कोई महिला श्रमिक के तौर पर कार्य करती है तो उसे पुरुष श्रमिक की अपेक्षा कम मज़दूरी प्रदान की जाती है। यद्यपि सरकारी तौर पर पुरुष श्रमिक की अपेक्षा श्रमिकों हेतु समान मज़दूरी देने की व्यवस्थाए हैं, लेकिन व्यवस्थाओं को चलाने वाले अंतिम स्तर के लोग व्यवहारिक तौर पर महिलाओं के साथ आम तौर पर ऐसा ही व्यवहार करते हैं। यहाँ के ग्रामीण समाज में भी यही प्रणाली प्रचलित हैं। कृषि का अधिकांश कार्य महिला पर ही निर्भर हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि उत्तराखंड में नारी के बगैर कृषि संभव नहीं है।

उत्तराखंड राज्य गठन के 15 वर्ष बाद भी यहाँ से पलायन लगातार बढ़ता जा रहा है। राज्य के 2 जनपदों पौड़ी और अल्मोड़ा की जनसंख्या में वर्ष 2001 की तुलना में कमी आई है। वर्ष 2001 में पौड़ी की जनसंख्या 697, 078 थी जो 2011 में घटकर 687, 271 रह गई है। इसी तरह अल्मोड़ा की जनसंख्या जो वर्ष 2001 में 630, 567

थी, घटकर वर्ष 2011 में 622, 506 रह गई है। पुरुषों के पलायन से गाँव की अर्थव्यवस्था की ज़िम्मेदारी महिलाओं के ऊपर और ज़्यादा आ गई है।

महिलाओं ने विषम परिस्थितियों के बावजूद सामाजिक आंदोलनों में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया और अपनी अहम भूमिका को स्थापित किया। उत्तराखंड की महिलाएँ राष्ट्रीय स्तर से लेकर स्थानीय समस्या पर्यावरण के प्रति संवेदनशील रही है। उन्होंने सामाजिक चेतना, मद्य निषेध शैक्षिक उत्थान आदि आंदोलनों में सक्रिय भागीदारी की है। राष्ट्रीय स्तर से लेकर स्थानीय सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु समाज में प्रचलित कुरीतियों, अंधविश्वासों के उन्मूलन, शैक्षिक उन्नयन, मद्य निषेध तथा वन बचाओ आंदोलनों में महिलाएँ सक्रिय रही हैं।

संपूर्ण भारत वर्ष की भाँति उत्तराखंड राज्य में भी महिलाओं के विकास एवं कल्याण के कार्य किए जा रहे है। उत्तराखंड राज्य में भी अन्य राज्यों कि भाँति महिलाओं की समस्याओं के समाधान के लिए 2005 में उत्तराखंड महिला आयोग की स्थापना की गई। जो वर्तमान में देहरादून में स्थित है जो तब से निरंतर महिलाओं के विकास के लिए कार्यरत् है।

उत्तराखंड के परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण का आकलन करें तो यहाँ की स्थिति भारत के अन्य राज्यों से बेहतर है। 1972-74 के दशक में पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में 'चिपको आंदोलन' की नायिका बनकर गौरा देवी ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 'चिपको वूमन' के नाम से प्रसिद्धि पाई। महिला मंगल दलों के माध्यम से पर्यावरणविद् चण्डीप्रसाद भट्ट का सहयोग पाकर उन्होंने जनजागरण द्वारा स्थानीय लोगों को वनों के अधिकार दिलाने का ऐतिहासिक कार्य किया। इसी क्रम में बौणीदेवी तथा प्रेमादेवी का योगदान भी उल्लेखनीय है। राधा बहन के नेतृत्व में अवैध खनन द्वारा जल, ज़मीन, जंगलों को बचाने हेतु चला खरीकोट आंदोलन पर्यावरण रक्षा में मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। सामाजिक-चेतना जागृत करने के क्षेत्र में टिहरी की सुश्री मंगला देवी उपाध्याय का सक्रिय योगदान रहा। उन्होंने टिहरी रियासत के भारत गणराज्य में विलय के पश्चात् उस क्षेत्र में सर्वतोन्मुखी प्रगति हेतु महिला-मंडल दलों की स्थापना की। इसी क्रम में श्रीमती शकुंतला देवी और श्रीमती चंद्रा पंवार के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। 1948 में महंत नारायण गिरिभाई ने सर्वप्रथम रूद्रप्रयाग में कन्या पाठशाला की नींव डालकर पर्वतीय क्षेत्रों में महिला-शिक्षा के द्वार खोल दिए। मसूरी में श्रीमती ताराप्रकाश के संरक्षण में शिक्षा, हरिजन, बस्तियों के बच्चों के लिए पाठशालाएँ आदि में श्रीमती राजेश्वरी सजवाण का योगदान रहा। महात्मा गाँधी की विदेशी शिष्या सरला बहन (मिस कैथरिन हैलीमन) ने पर्वतीय महिलाओं के कल्याण हेतु कौसानी में 'लक्ष्मी आश्रम' नामक संस्था की स्थापना की। इस आश्रम में सर्वोदयी विचारधारा के अंतर्गत बालवाड़ी केंद्र, कताई-बुनाई प्रशिक्षण आदि स्वावलंबन के

कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। टिहरी गढ़वाल में राजमाता कमलेंदुमती शाह के प्रयासों से 1962 में नरेंद्र महाविद्यालय की स्थापना की गई। जनपद देहरादून के ग्राम ढकरानी में श्रीमती मंगलादेवी जुयाल द्वारा ग्रामीण स्वास्थ्य-सेवा एवं धर्मार्थ औषधालय की स्थापना की गई थी। उत्तराखंड आंदोलन वस्तुतः महिलाओं की अगुवाई में लड़ा गया आंदोलन ही था। 90 के दशक के इस आंदोलन की शुरुआत में ही प्रत्येक नगर एवं क़स्बे में महिलाओं के प्रदर्शन हुए। उदाहरण के लिए टिंचरी माई जिन्होंने उत्तराखंड राज्य में शराब के विरुद्ध आंदोलन किया, महिलाओं और बच्चों के लिए शिक्षा के लिए कार्य किया, तथा अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसी प्रकार गौरा देवी जिन्होंने गढ़वाल के रैणी गाँव में वृक्ष कटान के विरुद्ध पर्यावरण संरक्षण के लिए वृक्ष बचाओ अभियान चलाया। एवरेस्ट पर तिरंगा फहराने वाली पहली भारतीय महिला पद्मश्री बछेन्द्री पाल, गंगोत्री गर्ब्याल, राधा भट्ट, महादेवी भटनागगर, डॉ. गिरिबाला जुयाल एवं केरन हिल्टन तथा नैरोबी में ग्लोबल वूमन एसेम्बली ऑफ इन्वायरमेंट में भारत का नेतृत्व करने वाली रैणी गाँव की बाली देवी राणा, प्रसिद्ध साहित्यकार पद्मश्री गौरा पंत 'शिवानी' प्रसिद्ध लेखिका व पत्रकार पद्मश्री मृणाल पांडे, उत्तराखंड आंदोलन को नेतृत्व देने वाली कमला पंत, सुशीला बलूनी, कौशल्या डबराल, सुभाषिनी बर्त्वाल सहित कई महिलाओं ने इस राज्य को शक्ति के साथ समृद्धि भी प्रदान की है।

इस प्रकार कई ऐसे उदाहरण है जो उत्तराखंड राज्य में महिलाओं की जागरूकता एवं सशक्तता का परिचय देते है। परंतु हर सिक्के के दो पहलू होते है। उत्तराखंड के कई जिले ऐसे है जहाँ पर महिलाओं की स्थिति आज भी उतनी बेहतर नहीं है जितनी होनी चाहिए। महिलाओं को सशक्त करने की सर्वप्रथम अनिवार्यता है महिलाओं की शिक्षा। शिक्षा के द्वारा ही सशक्तिकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

उत्तराखंड में साक्षरता

वर्ष	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
1951	18.93	32.15	4.78
1961	18.05	28.17	7.33
1971	33.26	46.95	18.61
1981	46.06	62.35	25.00
1991	57.75	72.79	41.63
2001	71.60	83.30	59.60
2011	78.82	87.40	70.00

उपर्युक्त तालिका के अनुसार राज्य की औसत साक्षरता में सर्वाधिक वृद्धि 1961-71 के दौरान हुई है। तालिका से स्पष्ट है कि 2011 में राज्य की औसत साक्षरता में पूर्व वर्ष 2001 की अपेक्षा 7.20% की वृद्धि हुई। इस दौरान महिला साक्षरता में 10.4% की तथा पुरुष साक्षरता में 4.10% की ही वृद्धि हुई।

73वें संविधान संसोधन के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था में सहभागिता प्रदान कर महिलाओं को राजनीतिक शक्ति संरचना में स्थान देने का प्रयास किया गया है, परंतु उनके सशक्तिकरण का लक्ष्य अभी भी अधूरा है। शिक्षा, स्वास्थ्य स्थिति, आर्थिक सहभागिता, निर्णय क्षमता, कानूनी ज्ञान आदि के संदर्भ में महिलाओं की स्थिति न सिर्फ़ पुरुषों की तुलना में बल्कि नगरीय स्त्रियों से भी अपेक्षाकृत कमज़ोर है। इस स्थिति को देखते हुए उत्तराखंड सरकार द्वारा महिला सशक्तिकरण एवं बाल विकास से संबंधित योजनाएँ चलाई गई है।

महिला सशक्तिकरण मिशन-निर्भया योजना : महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराधों और दुरर्व्यवहार रोकने के लिए निर्भया योजना का 2013-14 में जनपद नैनीताल, ऊधम सिंह नगर, पौड़ी गढ़वाल एवं टिहरी गढ़वाल में क्रियान्वयन जिसे संपूर्ण उत्तराखंड में लागू किया जाएगा।

मुख्यमंत्री महिला सतत् आजीविका योजना : निराश्रित, विधवा एवं निर्बल वर्ग की महिला/किशोरी हेतु आवश्यकता आधारित प्रशिक्षण 50,000 तक सीड अनुदान एवं प्रशिक्षण अवधि में 1,000 की छात्रवृत्ति।

इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना : 1. योजनांतर्गत 2013-14 के प्रति लाभार्थी अनुदान की राशि 4000/- से 6000/- की।

राज्य स्तरीय तीलू रौतेली पुरस्कार एवं राज्य/जनपद स्तरीय महिला सम्मान पुरस्कार विवरण हेतु पात्रता रखने वाल लाभार्थियों को समाचार पत्रों के माध्यम से प्राप्त करने हेतु विज्ञप्ति प्रकाशित।

मुख्यमंत्री बाल पोषण योजना : 2014-15 से मुख्यमंत्री बाल-पोषण योजना प्रारंभ।

आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर आज की महिलाएँ काफ़ी आगे निकल चुकी हैं, आर्थिक संपन्नता ने उन्हें सबलता प्रदान की है, लेकिन उनकी समस्याओं का अंत नहीं हुआ है। वस्तुतः आज भी उनका मानसिक, शारीरिक व यौन उत्पीड़न होता है। इस त्रासदी का कारण हमारी पुरुष-प्रधान सामाजिक व्यवस्था में ढूँढ़ा जा सकता है। आज आर्थिक रूप से महिलाओं की स्थिति तो बदल गई लेकिन पुरुषों की सदियों पुरानी मानसिकता नहीं बदली, सोच नहीं बदली। उंगलियों पर गिने जाने वाले कुछ मामलों को छोड़ दें तो आज भी एक सामान्य भारतीय परिवार में महिलाओं की स्थिति दोयम दर्ज़े की ही है। दरअसल आर्थिक निर्भरता से ज़्यादा ज़रूरी है सामाजिक प्रतिष्ठा, समाज में महिलाओं को यह स्थान मिल सकता है राजनैतिक सत्ता में भागीदारी से।

महिला शोषण व उत्पीड़न एक विकृति है, सामाजिक व्याधि है जिसका सामाजिक उपचार होना चाहिए, कानूनों का जंजाल नहीं। कानून प्रभावी हों इसके लिए सामाजिक, सांस्कृतिक, लोकाचार में महिला सशक्तिकरण को वास्तविक बनाना होगा। समाज निर्माण स्त्री-पुरुष दोनों पक्षों की सम्मानजनक सहभागिता से ही संभव है। यह सम्मानजनक वातावरण परिवार से ही प्रारंभ करना होगा। प्रत्येक परिवार में पति द्वारा पत्नी, पुत्री और बहु का सम्मान, बेटे द्वारा माँ तथा बहन की गरिमा को बनाए रखना होगा और इस प्रारंभ से पड़ोस और समाज की अन्य महिलाओं के प्रति पुरुषों में सम्मान का भाव जगेगा। जब ऐसा होगा तभी महिला घर और बाहर अपने को सुरक्षित महसूस करेगी, जिससे उनमें सशक्तता आएगी और समाज और राष्ट्र भी सशक्त होगा।

❑

संदर्भ

1. अशोक यमुनादत्त वैष्णव, कुमाऊँ का इतिहास नैनीताल, 1977
2. त्रिपाठी कसुम, औरत इतिहास रचा है तुमने, कल्याणी शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली 2012
3. सिंह मीनाक्षी, महिला कानून, महेंद्र बुक कंपनी गुड़गाँव (हरियाणा) 2013
4. शर्मा बोरा नीता, उत्तराखंड में महिलाओं की स्थिति एवं भूमिका, महिला अध्ययन केंद्र कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, 2014, ISBN : 978-93-5104-583-0
5. विप्लव, महिला सशक्तिकरण विविध आयाम, राहुल पब्लिकेशन मेरठ, 2013
6. नवानी लोकेश एवं रावत कल्याण सिद्ध, उत्तराखंड इयर बुक, विनसर पब्लिशिंग कं. जनवरी 2015
7. उत्तराखंड के प्रगति के पथ पर, सूचना एवं लोक संपर्क विभाग, देहरादून उत्तराखंड द्वारा प्रकाशित एवं एलाईड प्रिंटर्स, देहरादून, 2014
8. डॉ. निम्मी पंत उत्तराखंड में महिलाओं की स्थिति। Empowerment of Rural Women, Challenges and Solution, page no. 387.

डॉ. उषा देव

नारी! मत माँग अधिकार

नारी! रीते जन-मन से व्यर्थ
माँग रही तू अधिकार!
तू धरा सम है
ये टिके हुए हैं
तेरे ही रहमों-करम पर
छल, कल से तेरी छाती चीरें
तू सहर्ष देती जाती, देती जाती
अन्न, जल, जीवन
तेरी सुकुमारता, सहनशीलता को
न जाने-समझे अहम् के ये पुतले
क्यों, कैसे, कहाँ तू अबला
बस, ममतामयी दुर्गा है,
पर वही रणचंडी भी है,
क्षमाशील बन कर्म-क्षेत्र में
बढ़ती जा, मत इनको देख
वही मार्ग है शांति सुकून का
जीवन-यज्ञ, सफल हो जाता
फिर ये कौन?
बस उस अनंत आत्मा की यात्रा में
पल दो पल के साथी हैं।

❑

बस, चला-चल

जीवन एक भूल-भूलैया है
चला चल, न घबरा, मत रुक
माना पथ कटीला है
बटोही तो भी बढ़, तो भी बढ़
काँटे-कंकड़ देंगे पीड़ा
तो भी बढ़ चल
ध्रुव संकल्पों के आगे
पर्वत झुक जाया करते हैं
ये काँटे पाँव तले तेरे
पिस-पिस नरम धूल बन जाएँ
पग से टपकीं, खून की बूँदें
गुलाब-पंखुरियाँ बन महकेंगी
भावी-पथिकों का निश्चय ही
मार्ग सहज सरल हो जाएगा
तू चला, तू सफल हुआ
क्या यह कम है?
सो, तू चला-चल,
बस, तू चला चल।

❑

कविता

डॉ. अनिता डगोरे

ऐसा पिता ने कहा था

साँप तो बहुत देखे
पर आस्तीन का साँप देखा पहली बार
किस पर करें विश्वास
अब हर आदमी बेईमान लगता है।
बचपन की सीख
सच्चाई की राह पर चलो
ईश्वर तुम्हारा भला करेगा
ऐसा पिता ने कहा था
हमेशा सत्य की विजय होती है
ऐसा पिता ने कहा था
पर सत्य को देखा है यहाँ पिटते
झूठ के सामने घिसटते
झूठ के खूबसूरत लिबास
यहाँ कर रहे हैं राज
यहाँ रोज अपने काम निकाले जाते हैं
अफसरों की चापलूसी कर
अपनत्व जताते हैं
फिर पीठ पीछे उन्हीं अफसरों के
खोट गिनाते हैं
हममें है खोट इतना
नकाब पहनना नहीं जानते
सीधेपन में रहते हैं और मूर्ख कहलाते हैं
जिन पर किया था विश्वास,
उन्होंने ही किया है वार

अपने आपसे पूछती हूँ
'क्या मैं भी इन्हीं की तरह बन जाऊँ
पिता की दी हुई नसीहत को भूल जाऊँ
मैं ऐसा कर नहीं सकती
राजनीति के दलदल में पड़ नहीं सकती
नसों में दौड़ती ख़ून की धारा
बदल नहीं सकती
आप मुझे मूर्ख समझें या कमज़ोर
मैं अपने ईमान से गिर नहीं सकती।'
आज जुबाँ निशब्द है
आँखों में हैं आँसू और दिल में दर्द
पूछती हूँ ख़ुद से
कब तक चलेगा यह सिलसिला
आदमी को आदमी से
रहेगा गिला?

❑

सुमन कुमारी

स्कर्ट या शार्ट्स नहीं सोच जिम्मेदार है

नेशनल इंस्टि्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में एक छात्रा के साथ छेड़खानी की घटना के बाद हॉस्टल मैनेजमेंट के एक अधिकारी के कथित बयान 'अगर शार्ट्स पहनकर घूमोगी तो ऐसा ही होगा' और केंद्रीय संस्कृति मंत्री महेश शर्मा द्वारा विदेशी महिला टूरिस्टों को भारत में स्कर्ट न पहनने की कथित सलाह ने 2007 की उस घटना की याद दिला दी जब किरोड़ीमल कॉलेज की उत्तर-पूर्व की छात्रा के साथ हुए सामूहिक बलात्कार के बाद कॉलेज के प्रिंसिपल ने उत्तर-पूर्व की सभी छात्राओं को अगले दिन से कॉलेज में सलवार-कमीज पहनकर आने की हिदायत दी थी। शिक्षण संस्थानों और सरकारी अधिकारियों द्वारा महिलाओं के शोषण पर उनके कपड़े को दोषी ठहराने के बयान पूरी तरह से संवेदनहीन हैं। हमारे समाज में राजनैतिक मंच से इस तरह के बयान देना कोई नई बात नहीं है। महिलाओं से जुड़ी किसी भी तरह की घटना को जब-जब राजनितिक मंच पर उठाया गया तो इसके लिए प्रत्यक्ष तौर पर महिलाओं और उनके कपड़े को ही दोषी ठहराया गया है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था, जेंडर और यौन हिंसा

महिलाओं से जुड़ी किसी भी तरह की हिंसा की घटनाओं के अध्ययन से ये स्पष्ट होता है कि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं के विरुद्ध होने वाले किसी भी तरह के शोषण और हिंसा के लिए पितृसत्ता की व्यवस्था उत्तरदायी है। इस व्यवस्था के तहत जिस प्रकार से महिलाओं के साथ दुर्व्यव्यवहार किया जाता है उसके पीछे जेंडर आधारित सोच भी जिम्मेदार है। जेंडर उस सामाजिक और सांस्कृतिक सोच का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ महिलाएँ हमेशा पुरुषों से हीन और निम्न मानी जाती है। अधिकतर पारिवारिक व्यवस्था में इसी सोच के साथ लड़के और लड़की का विपरीत तरीके से पालन पोषण किया होता है जहाँ लड़कों को हमेशा मज़बूत, आक्रामक और मर्द बनने की सीख दी जाती है वही लड़की की परवरिश इस तरह से की जाती है कि वो अपने प्रति होने वाली हर हिंसा

को चुपचाप सह सके। इसी सोच के कारण ही अधिकतर पुरुषों में लड़कियों को हमेशा अपना वर्चस्व दिखाने और लड़की को वस्तुवादी तरीके से देखने का नजरिया विकसित होता है और यही लड़कियों के साथ होने वाले हर हिंसा और शोषण की जड़ है, इसलिए कपड़ों को दोष देना पूरी तरह से बेबुनियादी सोच है और इस सोच को बढ़ावा देने के लिए बड़े स्तर पर कई तत्त्व जिम्मेदार हैं जिसमें हमारी हिंदी फिल्म इंडस्ट्री भी शामिल है खासतौर पर 1990 के दशक की वो फिल्में जिसमें हिरोइज्म को ग्लोरिफाई करने के लिए हिरोइन को एक ऑब्जेक्ट के रूप में पेश किया गया। हीरो का हिरोइन के पीछे भागना, उसे छेड़ना, परेशान करना और बाद में हिरोइन का हीरो के प्यार में पड़ना आदि को इस तरह से ग्लोरिफाई किया गया कि यह आज भी हर युवा के लिए लड़की पटाने का बेहतरीन तरीका बन गया है जो ईव टीजिंग के रूप में हमारे सामने है।

इसके अतिरिक्त, नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो के द्वारा 2011 में दर्ज किए गए बलात्कार के आँकड़ों के अनुसार 94.2 प्रतिशत बलात्कार के मामलों में आरोपी पीड़िता के रिश्तेदार, परिजन, दोस्त आदि शामिल होते हैं और निरंतर आँकड़ों का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि 90 प्रतिशत बलात्कारी पीड़िता के जान-पहचान के लोग होते हैं जिसमें पिता और भाई तक शामिल रहते हैं। दूसरे शब्दों में, महिलाओं और लड़कियों के विरुद्ध यौन हिंसा सबसे अधिक उसके अपने घर में होती है इसलिए लड़की के पहनावे की आलोचना करना या उत्तरदायी मानना गलत है। कोई भी लड़की क्या पहनती है ये उसका निजी मामला है। उसके कपड़े पहनने का तरीका किसी को नापसंद हो सकता है मगर ये किसी भी लड़की के बलात्कार का कारण नहीं हो सकता।

अधिक बदलाव की जरुरत

आज भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में कुछ बदलाव आया है। पिछले सालों के आँकड़ों से पता चलता है कि आज महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्थिति पहले से कुछ बेहतर हुई है विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में। आज कई शिक्षण संस्थानों में लड़कियों की उपस्थिति लड़कों से अधिक है और वे स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ने के लिए उत्सुक है किंतु उनके विरुद्ध बढ़ते यौन अपराधों के आँकड़े उनके विकास के आँकड़ों से कहीं अधिक तेजी से आगे बढ़ रहे हैं इसलिए आज समाज में अधिक बदलाव की जरूरत है। जरूरत है कि लड़के और लड़की की परवरिश में कुछ बदलाव किया जाए। लड़कों की परवरिश कुछ ऐसी हो कि वो अपने विपरीत सेक्स के प्रति संवेदनशील हो और उन्हें आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र और समान वातावरण दे जो संविधान में दिए गए उनके अधिकारों के अनुरूप है और लड़कियों की परवरिश कुछ इस तरह की जाए कि वो अपने प्रति होने वाली किसी भी तरह की हिंसा, शोषण और दुर्व्यवहार का मज़बूती

के साथ विरोध कर सके। इसलिए एक नए बदलाव की जरूरत है।

मौजूदा सरकार ने अब बेटियों के विकास के लिए सेल्फी विथ डॉटर और बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओ की योजना लागू की तो उम्मीद है कि अब बेटियों के विकास में प्रगति आएगी किंतु इन योजनाओं के दूरगामी प्रभाव तब तक नहीं पड़ेंगे जब तक कि बेटियों और महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित नहीं होती। जब तक समाज में लड़कियाँ किसी भी तरह की हिंसा और यौन शोषण से सुरक्षित नहीं होती तब तक उनके सामाजिक, आर्थिक विकास से संबंधित योजनाएँ सफल नहीं होंगी।

❑

रेनू

आइये! कुछ नेक करें

आजकल अधिकतर समाचार लूटपाट, हत्या, बलात्कार जैसे अपराधों के बारे में रहते हैं। प्रायः मन खिन्न और आक्रोशग्रस्त हो जाता है। हमारे देश में ऐसे भी बहुतेरे इनसान हैं जो अपने नेक कामों से देश को आगे बढ़ा रहे हैं। क्या हम भी कोई नेक काम कर सकते हैं?

प्रो. संदीप देसाई मुंबई की ट्रेनों में भीख माँगते हैं। चौंकिए मत! यह सच है प्रो. देसाई रोज़ गरीब बच्चों को शिक्षित करने के लिए भीख माँगते हैं। भीख माँग कर वह महाराष्ट्र और राजस्थान में इंग्लिश मीडियम स्कूल चला रहे हैं जिसमें गरीब बच्चों को मुफ्त शिक्षा दी जा रही है। प्रो. देसाई भीख माँगते समय कहते हैं, ''जब आप किसी को खाना खिलाते हैं, तो आप एक दिन के लिए उसके खाने की व्यवस्था करते हैं, लेकिन जब आप किसी को शिक्षा देने में सहायता करते हैं, तो आप उसके जीवन-भर की रोजी-रोटी की व्यवस्था करते हैं।''

प्रो. देसाई मुंबई की रेलों में अब एक परिचित चेहरा हैं और रेल यात्री उनके भिक्षा बॉक्स में पैसे डालते जाते हैं और यकीन मानिए, वह भिक्षा से प्राप्त धन से ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल चला रहे हैं। साथ ही वह रेल यात्रियों का आभार भी व्यक्त करते हैं कि उन्हीं की सहायता से यह स्कूल संभव हो पा रहे हैं।'' किसी भी अच्छे काम को करने की कोई सीमा नहीं है।

वैसे उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब बच्चों की शिक्षा के लिए 'श्लोक मिशनरी' नाम से एक न्यास बनाया है जिसके माध्यम से शिक्षा के इस नेक काम के लिए दान दिया जा सकता है।

❑

डॉ. (श्रीमती) जयश्री गुप्ता

प्रश्न न्यायाधीशों की नियुक्ति का?

न्याय की उत्कृष्ट अवधारणा है कि ये सुलभ और त्वरित हो, इंसाफ पाने में न तो एडियाँ घिसे और ना उम्र कटे। लेकिन देश की कोर्ट कचहरियों में फाइलों का अंबार साल-दर-साल बढ़ता ही जा रहा है। लंबित मामलों का आँकड़ा आसमान छू रहा है। अधीनस्थ अदालतों में न्यायिक अधिकारियों के पद पहले ही खाली चल रहे हैं। इस बीच उच्च न्यायालयों में कालेजियम बनाम राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के मुद्दे के चलते न्यायाधीशों के पदों पर नियुक्तियाँ नहीं हो पा रही थी। केंद्र सरकार व उच्चतम न्यायालय के बीच बहस छिड़ी हुई थी कि आखिर न्यायाधीशों की नियुक्ति का कौन-सा मॉडल सही है, हालात यह बने कि देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों में स्वीकृत पदों के अनुपात में लगभग 40 प्रतिशत से ज्यादा पद रिक्त पड़े हुए थे।

कालेजियम हो या राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग इस मुद्दे पर भारत सरकार और उच्चतम न्यायालय पिछले दो साल से आमने-सामने रहे हैं। वित्त मंत्री अरूण जेटली का न्यायपालिका द्वारा कार्यपालिका में दखल न देने का बयान आया तो वहीं भारत के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति टी.सी. ठाकुर ने कहा कि न्यायपालिका तभी दखल देती है जब कार्यपालिका विफल होती है। कार्यपालिका व न्यायपालिका एक-दूसरे के पूरक हैं न कि प्रतिद्वंद्वी। दोनों अपनी सीमाओं में रह कर कार्य करें तो टकराव की नौबत नहीं आएगी। लेकिन राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के गठन के लिए संविधान में किए गए संशोधन को चुनौती दी गई। कई जज तथा न्यायविद् राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के खिलाफ उठ खड़े हुए। एफ.एस. नरीमन तथा राम जेठमलानी जैसे वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने दलील दी कि राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के गठन के लिए हुआ संविधान संशोधन संविधान भारत के विरुद्ध है क्योंकि संविधान के बुनियादी ढाँचे में न्यायपालिका को तरजीह हासिल है जिसे इस संशोधन ने संकुचित करने की कोशिश की है।

कालेजियम प्रणाली : उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की

नियुक्ति के लिए वर्ष 1993 में कालेजियम प्रणाली लागू हुई थी। इसके तहत उच्चतम न्यायालय के पाँच वरिष्ठ न्यायाधीश ही अन्य न्यायाधीशों का चयन व नियुक्ति करते हैं। इसी प्रकार, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति भारत के मुख्य न्यायाधीश और अन्य दो वरिष्ठ न्यायाधीश करते हैं। इस प्रणाली का उद्देश्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में कार्यपालिका के बढ़ते दखल को रोकना तथा न्यायपालिका की स्वतंत्रता के ध्येय को बरकरार रखना था। लेकिन कालेजियम प्रणाली में पारदर्शिता का अभाव था। बंद कमरों में न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती थी। व्यक्तिगत व प्रोफेशनल फाईल जाँचने की कोई निश्चित व्यवस्था नहीं थी, इसका रास्ता जस्टिस जे.एस. वर्मा की जजों की पीठ के एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड एसोसिएशन के मामले में एक फैसले से खुला था। बाद में जस्टिस वर्मा ने कहा था कि उनके फैसले का ठीक अर्थ नहीं लिया गया, इसकी समीक्षा हो।

राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग

कई ओर से कोलेजियम द्वारा न्यायाधीशों की नियुक्तियों के बारे में आलोचना हो रही थी कि न्यायाधीशों की नियुक्तियों के इस तरीके में पारदर्शिता नहीं है। यह नियुक्तियाँ उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और पाँच अन्य वरिष्ठतम न्यायाधीशों द्वारा की जाती थी जिसमें कार्यपालिका की कोई भूमिका नहीं होती है। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियों और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के स्थानांतरण को विनियमित करने के लिए भारत की संसद ने भारत के संविधान में एक नया अनुच्छेद 124-क जोड़कर और राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग विधेयक पास कर इस संबंध में नए प्रावधान किए। संविधान में संविधान (99वाँ संशोधन) अधिनियम, 2014 के द्वारा संशोधन पास किया गया। इस कानून को लोक सभा ने 13 अगस्त, 2014 तथा राज्य सभा ने 14 अगस्त, 2014 को पारित कर दिया था। तत्पश्चात्, इस संशोधन की भारत की 16 राज्य विधायिकों ने पुष्टि कर दी। इसके बाद राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी ने 31 दिसंबर, 2014 को इस पर सहमति दी। इस संविधान संशोधन, 2014 को तथा राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम, 2014 को 3 अप्रैल, 2015 को लागू कर दिया गया।

इस व्यवस्था के अंतर्गत इस आयोग का गठन भारत के मुख्य न्यायाधीश (पदेन) मुख्य न्यायाधीश के पश्चात् के अगले दो वरिष्ठ न्यायाधीश (पदेन), केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री (पदेन) तथा दो प्रतिष्ठित व्यक्तियों से किया जाएगा। इन दो प्रतिष्ठित व्यक्तियों का चयन भारत के मुख्य न्यायाधीश, प्रधान मंत्री एवं लोक सभा में विपक्ष के नेता (लोक सभा में सबसे बड़ी विपक्षी दल के नेता) की एक समिति द्वारा किया जाएगा। इन दो प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से एक व्यक्ति या तो अनुसूचित जाति अथवा

अनुसूचित जनजाति अथवा अल्पसंख्यक जाति अथवा कोई महिला होगी। इन व्यक्तियों का कार्यकाल तीन वर्ष का होगा और इनमें से किसी को पुनः नामांकित नहीं किया जाएगा अर्थात् अब उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण आदि में न्यायपालिका, कार्यपालिका और सिविल सोसायटी की भूमिका हो गई थी।

संविधान में किए गए इस नए संशोधन के अनुसार यह आयोग भारत के मुख्य न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और इसके न्यायाधीशों के नामों की सिफारिश करेगा। यह आयोग उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीशों के एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतण की सिफारिश करेगा। आयोग यह भी सुनिश्चित करेगा कि जिन व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की जाएगी वह अधिनियम में दिए गए मानकों की कसौटी पर खरे उतरते हों।

इस अधिनियम के लागू हो जाने के बाद कुछ अधिवक्ताओं, अधिवक्ता संघों और समूहों ने 2015 में उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर कर इस नए व्यवस्था की चुनौती दी। तीन-सदस्यीय एक न्यायिक पीठ ने इस मामले को संवैधानिक पीठ के पास सुनवाई के लिए भेज दिया। 16 अक्तूबर, 2015 के अपने एक आदेश में उच्चतम न्यायालय ने इस दो दशक वाली कॉलेजियम व्यवस्था को बरकरार रखा और इन अधिनियमों को असंवैधानिक घोषित कर दिया। उल्लेखनीय है कि इस संविधान पीठ में मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री जे.एस. खेहर, एम.बी. लोकुर, जोसफ कुरियन और आदर्श कुमार गोयल ने इस निर्णय के पक्ष में लिखा जबकि न्यायमूर्ति श्री जे. चेलमेश्वर ने इसका विरोध किया।

उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने एन.जे.ए.सी. एक्ट को इस आधार पर अवैध घोषित कर दिया गया कि यह न्यायपालिका की स्वायत्तता और स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करता है। हालाँकि उच्चतम न्यायालय, उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों के इस सुझाव पर सहमत हो गया कि केंद्र सरकार, उच्चतम न्यायालय कालेजियम की सलाह लेकर न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए एक मेमोरेंडम ऑफ प्रोसिजर (एम.ओ.पी.) ड्रॉफ्ट करेगी।

केंद्र सरकार ने मार्च, 2016 में मेमोरेंडम ऑफ प्रोसीजर को अंतिम रूप देकर उच्चतम न्यायालय कालेजियम को भेजा। चीफ जस्टिस ऑफ इंडिया श्री टी.एस. ठाकुर ने गत 25 मई, 2016 को केंद्र सरकार के सुझावों को बिंदुवार खारिज करते हुए वापस भेज दिया। केंद्र सरकार ने कड़ा रूख अपनाते हुए भारत के तत्कालीन अटार्नी जनरल श्री मुकुल रोहतगी को निर्देश दिए कि वह खारिज किए हुए बिंदुओं का क्रमानुसार प्रत्युत्तर ड्रॉफ्ट करे, जिसमें वे आधार भी वर्णित किए जाएँ क्योंकि सरकार को उच्चतम न्यायालय कालेजियम का रिजेक्शन स्वीकार नहीं है। केंद्र ने जो सुझाव एम.ओ.पी. में दिए थे उनमें से प्रमुख था कि केंद्र सरकार राष्ट्रीय हित में उच्चतम न्यायालय के कालेजियम की नियुक्ति

अनुशंसा को रद्द कर सकता है अर्थात् उस ड्रॉफ्ट एम.ओ.पी. में एक यह प्रावधान है जिसमें कहा गया है कि सरकार 'राष्ट्रीय सुरक्षा' के हित में किसी नाम को स्वीकार करने से इनकार कर सकती है। कॉलेजियम इस प्रावधान को न्यायपालिका की स्वायतता में कार्यपालिका का हस्तक्षेप मानता है। वहीं दूसरा सुझाव यह था कि उच्चतम न्यायालय को सभी न्यायाधीश, अटार्नी जनरल बार एसोसिएशन के सदस्यों की भी सलाह के बाद ही न्यायाधीशों के नाम की अनुशंसा उच्चतम न्यायालय कालेजियम को करनी चाहिए।

केंद्र सरकार कब तक प्रति उत्तर भिजवाएगी। इस पर फिलहाल कोई फैसला नहीं हुआ है। इस गतिरोध के चलते उच्च न्यायालयों की 40 प्रतिशत रिक्तियाँ भरने में और विलंब हो सकता था। इस तकरार का क्या नतीजा होगा? कोई राह निकलेगी या बढ़ते मुकद्दमों तथा न्यायाधीशों की कमी देश की जनता भुगतेगी? इस बीच सरकार ने कई न्यायाधीशों के नामों पर अपनी मुहर लगा दी और नियुक्ति हो रही हैं।

पिछले तीन वर्षों में बल्कि दिसंबर, 2015 की 15 न्यायाधीशों की तथा बाद की अवधि में सरकार उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में 250 न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ कर चुकी है।

वैसे कार्यपालिका चाहती है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति में उसका दखल हो। जबकि न्यायपालिका नहीं चाहती कि सरकार के नुमाइंदों की मौजूदगी जजों की नियुक्ति प्रक्रिया में हो। इसका एक कारण यह भी है कि न्यायालय के समक्ष आने वाले अधिकांश मामलों में सबसे बड़ी पार्टी सरकार की होती है और सरकार के नुमाइंदों की मौजूदगी से जजों की नियुक्ति प्रक्रिया की पारदर्शिता और विश्वसनीयता पर भी सवाल उठ खड़े होंगे।

राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के कानून को खारिज कर चुकी संविधान पीठ के सदस्य रहे जस्टिस कुरियन कालेजियम में पारदर्शिता की कमी की बात कह चुके हैं। उन्होंने यहाँ तक कहा कि इसमें सुधार के लिए पेरेस्त्रोईका (खुले द्वार की नीति) की आवश्यकता है। पूरे समाज के भरोसे से जुड़े इस विषय पर विवाद बढ़ाने के बजाय ऐसा रास्ता निकालने की जरूरत है जिससे इस अनिश्चितता के दौर से बाहर निकालने में मदद मिल सके। कालेजियम सिस्टम में सुधार के लिए गोष्ठियाँ, सेमिनार या कार्यशाला आयोजित की जा सकती हैं। अपने तमाम अनुभवों के बावजूद न्यायालय न तो इसके लिए प्रशिक्षित होते हैं और न ही इस मामले में विशेषज्ञता होती है। इसके लिए कानून के जानकार तथा सम्मानित लोगों की सेवा ली जा सकती है। कुछ लोगों की समिति बनाकर अब तक मिले सुझावों और अपने अनुभवों के आधार पर सरकार एक नियमावली का प्रारूप न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करे, जिससे संतुष्ट होने पर न्यायालय उसे अपने निर्णय का हिस्सा बना ले। ना तो उच्चतम न्यायालय और न ही सरकार को कालेजियम

के मामले को अहम् का मुद्दा बनाना चाहिए, क्योंकि ये दोनों लोकतंत्र के महत्त्वूर्ण स्तंभ हैं और इनमें टकराव उचित नहीं।

अभी हाल ही में वरिष्ठ न्यायाधीश श्री जे. चेलमेश्वर ने उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति की मौजूदा कालेजियम प्रणाली पर पुनः सवाल उठाया है। उन्होंने कालेजियम की बैठकों में भाग लेने से इनकार कर दिया है। जस्टिस चेलामेश्वर कालेजियम के पाँच सदस्यों में से एक है। वे पूर्व में भी कालेजियम प्रणाली पर आपत्ति दर्ज करा चुके हैं। जब उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने सरकार के इस कानून को खारिज कर दिया था, उस समय उन्होंने जजों की नियुक्ति और तबादले में पारदर्शिता की कमी को रेखांकित किया था, उन्होंने कहा था कि कालेजियम की कार्यवाही अपारदर्शी होती है।

जब कालेजियम के सदस्य न्यायाधीश इस प्रणाली की विश्वसनीयता पर सवाल उठा रहे हैं तो इसमें सुधार आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। हालाँकि भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश टी.एस. ठाकुर ने आश्वासन दिया था कि शीघ्र ही इस समस्या को सुलझा लिया जाएगा, उम्मीद है कि जल्द ही उच्चतम न्यायालय बनाम केंद्र सरकार के इस विवाद पर विराम लगेगा।

❑

Garima Yadav

Right to Food in Global and National Perspective

Introduction

Human life is meaningless without access to basic necessities which are essential for sustenance of life. Food is one such basic necessity and human life cannot be imagined without it. Over the centuries of human existence on planet earth, the food, clothing and shelter have emerged as three basic necessities. While shelter and clothing have emerged as basic needs in due course of human evaluation, food has been a major source of energy and existence since beginning of life. It is the right of every human being to be free from hunger and to have access to safe and nutritious food. Right to food is a human right and it is about ensuring that all people have the capacity to feed themselves in dignity. Right to food guarantees freedom from hunger and access to safe and nutritious food. However, the problem of hunger, malnutrition and starvation deaths are very rampant in various parts of the country. There are so many vulnerable groups such as women and their dependent children, refugees and disabled persons who are exposed to hunger deaths. These are the groups whom government is required to protect under international obligations and also by the provisions of constitution of respective nations.[1]

Basically, right to food is a human right, which is universally acknowledged at international, national, and regional level and applies to every person around the world. The right to food is a vital human right that, if denied, renders human life stunted, painful, or null, because logically, humans must eat to stay alive. This right to food and nutrition was recognized as a human right in world food summit, wherein the world leaders gathered in Rome not only formally renewed their commitment to the right to food, but specially interpreted it as the right of everyone to have

access to safe and nutritious food consistent with the right to adequate food and fundamental right of every one to be free from hunger.[2]

Right to Food at Global Level

Right to food is recognized at international level also. There are various international instruments to protect and safeguard the Right to Food. Article 25 of the Universal Declaration of Human Rights, 1948(UDHR) declares that "everyone has the right to standard of living adequate for the health and well being of himself and of his family, including food, clothing, housing and medical care and necessary social services and the right to security in the event of unemployment, sickness, disability, widowhood, old age or other lack of livelihood circumstances beyond his control". International Covenant on Economic, Social, and Cultural Rights (ICESCR), also recognizes need for adequate food[3] .This covenant intimates an undertaking to cooperate without any territorial or jurisdictional limitations to ensure the realization of the right to food.[4]

Article 1 of the **Universal Declaration of the Eradication of Hunger and Malnutrition,** 1974 declares that every man, woman and child has right to be free from hunger and malnutrition in order to develop fully and maintain their physical and mental faculties[5].

Article 2 declares that it is a fundamental responsibility of every government to work together for higher food production and a more equitable and efficient distribution of food between countries and within countries and government should initiate immediately a greater concerted attack on chronic malnutrition and deficiency diseases among the vulnerable and lower income groups. It further declares that in order to ensure adequate nutrition for all, government should formulate appropriate food and nutrition policies integrated in overall socio-economic and agricultural development plans based on adequate knowledge of available as well as potential food resources. Article 3 declares that food problems must be taken care during the preparation and implementation of national plans and programmes for economic and social development with emphasis on their humanitarian aspect. Thus right to food is recognized in many international conventions such as the **Convention on the Elimination of all forms of Discrimination against Women** (CEDAW).[6]

Article 25 and 27 of the Convention on the Rights of the child (CRS) also recognize rights to the highest attainable standard of health and adequate standard of living. Therefore, both these articles include food and nutrition. Paragraph 5 of the general comment No.12 of ICESCR under code of conduct which was prepared by Non-Governmental Organizations and

United Nations agencies observes that the roots of the problem of hunger and malnutrition are not lack of food, but lack of access to available food. Therefore, the states have a core obligation to take the necessary action to mitigate and alleviate hunger, even in time of natural or other disasters. Under ICESCR, there is obligation upon state parties that they must do everything possible to ensure adequate nutrition, and even under the narrower interpretation of right to food, the Governments must maintain an environment in which people can feed themselves[7]. The conspicuous absence of provisions relating to right to food in large majority of nation states constitutions indicates that even today much attention has not been paid to such vital fundamental human right. There is no redress available to the victim citizens and the States continue to violate the global obligations.

Right to Food at National Level

After independence, India adopted a progressive constitution and aimed at securing all its citizens, social, economic and political justice, equality and dignity. There is no express provision in the Indian constitution conferring right to food. It has been although incorporated through an extension of a broader fundamental right to life and personal liberty under Article 21 with the help of Directive Principles of State Policy as contained in Article 38, 39 (a) and 47. Article 21 states that no person shall be deprived of his life or personal liberty except according to the procedure established by law. Article 38 declares that (1) the State shall strive to promote the welfare of the people by securing and protecting as effectively as it may a social order in which justice, social, economic and political, shall inform all the institutions of the national life, (2) the State shall, in particular, strive to minimize the inequalities in income, and endeavour to eliminate inequalities in status, facilities and opportunities, not only amongst individuals but also amongst groups of people residing in different areas or engaged in different vocations. Article 39 declares that (a) the state shall, in particular, directs its policy towards securing the citizens, men and women equally, have the right to an adequate means of livelihood, (b) the ownership and control of the natural resources of the community are so distributed as best to subserve the common good, (c) the operation of the economic system does not result in concentration of wealth and means of production to common detriment. Article 37 explicitly states that the directive principles of state policy shall not be enforceable by any court, but the principles therein laid down are nevertheless fundamental in governance of the country and it shall be the duty of the state to apply these principles in making laws. Article 226 and 32 empower every High

Court and the Supreme Court respectively to enforce the fundamental rights. In this way, reading of Article 21 together with the said directive principles places the issue of food security in correct perspective and makes the right to food a guaranteed fundamental right which is enforceable by virtue of constitutional remedy provided under Article 32 of Indian constitution.

The requirements of the Constitution preceded and are in consonance with the obligations of the States under ICESCR, 1966 to which India is a party. It is pertinent to note that the Article 11 expressly recognizes the right of everyone to an adequate standard of living including adequate food.[8]

Supreme Court and the Right to Food

Judiciary has played a vital role with regard to right to food. Supreme Court through its judgments in various cases protected the vulnerable poor and distress class of society. The apex court of India has repeatedly reaffirmed that the "fundamental right of life enshrined d in Article 21 means something more than mere animal existence and includes the right to live with dignity.[9] It would include all aspects which make life meaningful, complete and living.[10]

In **Chameli Singh**[11] case, the Supreme Court observed that right to life guaranteed in any civilized society implies the right to food, water, good environment, education, medical care and shelter. In **Kishan Pattnayak & another v. State of Orissa**[12] the Court held that the individual's right to food is necessary outcome of fundamental right to life guaranteed under Article 21 of the constitution and thus recognized close nexus between right to life and the right to food. **PUCL v. Union of India**[13] popularly known as right to food case can be said to be a turning point in this regard. This writ petition was filed in the Supreme Court praying for directions to central government to release food grains from Food Corporation of India (FCI) gowdons to the people who are starving to death in State of Rajasthan.[14] Supreme Court took the matter very seriously and directed the petitioner to amend the petition and make all states and union territories party to the petition. Supreme Court observed:

"In our opinion what is of utmost importance is to see that food is provided to aged, infirm, disabled, destitute women, destitute men who are in danger of starvation, pregnant and lactating women and destitute children, especially in cases where they or members of their family do not have sufficient funds to provide food for them. In case of famine, there may be shortage of food but here the situation is that amongst plenty, there is *scarcity. Plenty of food is available, but distribution of the same amongst the very poor and the destitute is scarce and non-existent, leading to*

malnourishment, starvation and other related problem. By way of an interim order, we direct the states to see that all the PDS shops, if closed are re-opened and start functionary within one week from today and regular supplies made."

The Supreme Court also made the following order:

"The anxiety of the court is to see that the poor and the destitute and the weaker sections of the society do not suffer from hunger and starvation. The prevention of the same is one of the prime responsibilities of the government whether central or state. How this is to be ensured would be a matter of policy, which is best left to the government. All that the court has to be satisfied and which it may have to ensure is that the food grains which are over flowing in the storage receptacles, especially FCI godowns and which are in abundance should not be wasted by dumping into the sea or eaten by rats. Mere schemes without any implementation are of no use. What is important is that the food must reach the hungry".

On 28 November 2001, the court focused on eight food related schemes:

(1) Public Distribution System (PDS)
(2) Antyodaya Yojana (AAY)
(3) National programme of nutritional support to primary education, also known as mid day meal scheme (MDM)
(4) The integrated child development service (ICDS)
(5) Annapurna
(6) National old age pension scheme (NOAPS)
(7) National maternity benefit scheme (NMBS)
(8) National family benefit scheme (NFBS)

On 2nd May 2003, the Supreme Court made an important order when it found the approach of the government in the case "distressing", holding that the right to food would be an integral part of Article 21 of the Constitution. The Supreme Court held:

"Article 21 of the Constitution of India protects every citizen's right to live with human dignity. The very existence of life of those families who are below poverty line would come under danger for want of appropriate schemes and implementation thereof to provide requisite aid to such families."

In 2002, the court set up the institutional mechanisms independent of the executive, in the form of commissioner to monitor and report on the implementation of court order and suggest ways to promote food security rights of the poor. The commissioners gave reports on the issue related to various foods security schemes. In subsequent orders, the Court monitored implementation of its orders, warning governments against

slackness in implementation or watering down of court orders. As a result of various Supreme Court pronouncements, government of India first passed Food Safety and Standards Act, 2006 and then adopted Food Security Bill, 2013 which aimed to provide subsidized food grains to the Indian population.

National Food Security Act, 2013 is much awaited piece of legislation and it aims to provide subsidized food grains to two third of Indian people. This Act is motivated by constitutional, domestic and global commitments towards food availability and access. Aim of National Food Security Act, 2013 is to provide subsidized food grains to approximately two third of India's 1.2 billion people. The National Food Security Act, 2013 converts food security programmes of the government of India into legal entitlement. This Act includes Mid-day Meal Scheme, Integrated Child Development service scheme and the Public Distribution System. This Act also recognizes maternity entitlements. The mid-day meal scheme and Integrated Child Development Services Scheme are universal in nature whereas the PDS will reach about two third of the population i.e. 75% in rural areas and 50% in urban areas. The beneficiaries of the Public Distribution System are entitled for 5 kilograms per person per month of cereals. Even pregnant women, lactating mothers and certain categories of children are eligible for daily free cereals. This Act puts a duty on the State Governments to put in place an internal grievance redressal mechanism[15]. It can include Call Centers, Help lines, Nodal officers, a District Grievance Redressal Officer at each district.

Conclusion

National Food Security Act, 2013 is a novel step taken by the government for security of food to its citizens. Food Security means availability of sufficient food grains to meet the domestic demand as well as access at affordable prices. Section 3 of the Act recognizes the "Right to receive food grains at subsidized prices by persons belonging to eligible households ..." Food Security exists when all people, at all times, have physical, social and economic access to sufficient safe and nutritious food that meet their dietary needs and food preferences for an active healthy life.

The Food Security law would put a massive burden on an already overburdened exchequer as the government would have to procure additional food grains. Not only would they have to find more storage but also spend extra money to procure the grain. The additional procurement will drive up food inflation, even as fiscal overruns will create even more inflationary impetus. It is also submitted that the entire scheme would require lot of money. Bandying previous numbers, outlandish claims of

leakage of food through the PDS is very common phenomenon. And more than this the law claims to fulfill 75% of rural population and 50% of the urban poor population of India by securing food to them. How this is all possible is a big boon to the large poor population of India. Further, proper implementation of the programme and stringent punishment to erring officials and persons is a must. Majority opinion is that to have the law is to ensure welfare State which is what reflected in the preamble of the Indian Constitution. It is hoped that National Food Security Act will be able to provide Right to Food to our poor people. Need of hour is to its proper monitoring and implementation.

q

References :

1. "Right to Food in India-Whether A Protection Under fundamental Rights", Indian Bar Review vol. XXXIX(1) 2012, p. 40
2. Ibid.
3. Article 11 of ICESCR reads as "the right of every one to a adequate standard of living for himself and his family, including food, clothing and housing ....and fundamental right to be free from hunger"
4. Ibid.
5. Adopted on 16 November 1974 by the world food conference convened under General Assembly resolution 3180 (XXVIII) of 17 December 1973; and endorsed by General Assembly resolution 3348 (XXIX) of 17 December, 1974.
6. Article 12 protects the right of pregnant and lactating women with special problem with regard to adequate nutrition and Article 14 recognizes right of rural women with equal access to land, water, credit and other services, social security and adequate standard of living.
7. Supra note 2 at p. 44 and 45
8. Supra note 2 at p. 45
9. Maneka Gandhi v. Union of India, AIR 1978 SC 597
10. Francis Coralie v. Union of India, AIR 1981 SC 746
11. Chameli Singh v.State of Uttar Pradesh, (1996) SCC 549
12. AIR 1989 SC 677
13. Peoples Union for Civil Liberties v. Union of India and other, W.P. (Civil) No 196/2001
14. 2003 (9) SCALE 835
15. Sec.14, National Food Security Act, 2013

डॉ. कमला फुलोरिया

महिलाओं को मिलने वाले अवकाशों में सुधार की आवश्यकता

भारत में 12 हफ्ते का संवैतनिक मातृत्व अवकाश देने का कानून वर्ष 1961 से लागू है, 1 जनवरी, 2016 में महिला और बाल विकास मंत्री मेनका गाँधी ने यह कोशिश की, कि देश में महिलाओं को मिलने वाले 12 हफ्ते के संवैतनिक मातृत्व अवकाश की अवधि बढ़ाकर 26 हफ्ते कराई जाएँ। वह इसे निजी और सार्वजनिक सभी क्षेत्रों में लागू करना चाहती थी, इसे लेकर भी वही आपत्तियाँ उठाई गईं जो आमतौर पर ऐसे मामलों में उठाई जाती हैं। कैसे लागू हो पाएगा, छोटी कंपनियों और दिहाड़ी पर काम करने वाली महिलाओं का क्या होगा? केंद्र सरकार ने पहली बार छठे वेतन आयोग में सी.सी.एल. (चाइल्ड केयर लीव) की सिफारिश की थी, तो उसे महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम माना गया था, किंतु प्रसूति अवकाश की तरह इसे सभी राज्यों ने एक समानता के साथ नहीं अपनाया, जिसका कारण था आर्थिक नुकसान। सातवें वेतन आयोग में इसमें कटौती की सिफारिश भी की गई थी, जिसमें आयोग ने दो साल तक के पूर्ण संवैतनिक अवकाश के स्थान एक साल पूर्ण संवैतनिक अवकाश और दूसरे साल 80 प्रतिशत वेतन के साथ अवकाश देने का सुझाव दिया था। वेतन आयोग की रिपोर्ट के बाद यह मान लिया गया था कि इस सिफारिश को स्वीकार कर लिया जाएगा। किंतु केंद्रीय महिला व बाल विकास मंत्री मेनका गाँधी ने सी.सी.एल. में कटौती का विरोध किया, क्या वास्तव में जिन बच्चों के लिए सी.सी.एल. की आवश्यकता है उन्हें ही इस व्यवस्था का लाभ पहुँच रहा है, इस ओर किसी का ध्यान अभी तक नहीं गया है।

संयुक्त परिवार टूटने और एकल परिवार बढ़ने के कारण बच्चों का पालन-पोषण एक चुनौती बन चुका है। कैरियर और मातृत्व के बीच चुनाव, महिलाओं के लिए मानसिक

परेशानी का कारण बन गया है। बीते दशकों से महिलाओं ने परिवार के आर्थिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति में अपना सराहनीय योगदान दिया है। ऐसी परिस्थितियों में बच्चों की देखभाल हेतु पिता की भूमिका में, उनकी जिम्मेदारी भी बढ़ी है। सातवें वेतन आयोग ने एकल पिता के रूप में बच्चों की देखभाल कर रहे कर्मचारियों को राहत देने के प्रयास में, उन्हें भी सी.सी.एल. देने की सिफारिश की जो बदलते समय में आज की आवश्यकता भी है। अभी तक यह अवकाश केवल महिला कर्मचारी को दिया जाता है। आयोग ने कहा कि अगर पुरुष कर्मचारी अकेला है तो बच्चों के पालन-पोषण की पूरी जिम्मेदारी उसी पर आ जाती है। जस्टिस ए.के. माथुर की अध्यक्षता वाले आयोग ने कहा है, कि इसलिए एकल पिता को भी सी.सी.एल. दिए जाने की सिफारिश की जाती है। साथ ही आयोग ने यह भी कहा कि केवल वास्तविक प्रभावित कर्मचारी को ही इस योजना का लाभ मिले। इसके अतिरिक्त, आयोग में महिला कर्मचारियों के कंधों पर अतिरिक्त जिम्मेदारी के बोझ को समझकर एक कैलेंडर वर्ष में तीन की जगह छह बार अवकाश देने की व्यवस्था करने की सिफारिश की इसमें से 26 सप्ताह के मातृत्त्व अवकाश को 11 अगस्त, 2016 को कानूनी रूप से अपना लिया गया है।

केवल कानूनी रूप देना ही समस्या का समाधान नहीं है। इसके लिए महिलाओं को उसके लाभ लेने की जानकारी भी होनी चाहिए, क्योंकि बहुत-सी महिला कर्मचारियों को इसकी पूर्ण जानकारी भी नहीं है। उक्त अवकाश का लाभ कैसे, कब और कितना मिलेगा वह इस विषय से अनभिज्ञ हैं। मैटरनिटी बेनिफिट्स के अनुसार, महिलाओं को इसके अंतर्गत न सिर्फ छुट्टी मिलती है, बल्कि मानदेय और सालाना मिलने वाले इंक्रीमेंट्स तथा प्रमोशन भी अन्य कर्मचारियों की तरह दिए जाते हैं। यह सभी सरकारी और गैर-सरकारी कंपनियों में काम करने वाली महिलाओं के लिए अनिवार्य है जहाँ 10 से अधिक महिलाएँ काम कर रही हैं। यदि कोई कंपनी किसी महिला को यह सुविधा देने से वंचित रखती हैं, तो उक्त महिला को पहले कंपनी में अपना रिप्रजेंटेशन देना होगा, यदि इसके बावजूद बात नहीं बनती है तो कोर्ट भी जाया जा सकता है। इस दौरान, यदि उसकी नौकरी छिन जाती है तो वह नौकरी जाने के 60 दिनों के अन्दर अपीलेट अथॉरिटी के यहाँ अपील फाइल कर सकती है। इस एक्ट को न मानने वाले लोगों को कम-से-कम तीन माह की सजा और 5000 रुपए तक जुर्माना हो सकता है।

26 सप्ताह का मातृत्व अवकाश सिर्फ दो बच्चों के जन्म तक मिलेगा। इससे अधिक बच्चे होने पर अवकाश सिर्फ 12 सप्ताह का ही रहेगा। इसमें छह सप्ताह प्रसव से पूर्व होगा, इसी प्रकार तीन महीने तक के बच्चों को गोद लेने वाली महिला को भी 12 सप्ताह का मातृत्व अवकाश मिलेगा, इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा 18 वर्ष तक

के नाबालिक बच्चों की माता को शिशु देखभाल अवकाश (सी.सी.एल.) भी दिया जाता है।

राज्य सभा में 11 अगस्त, 2016 को मातृत्व अवकाश विधेयक पर चर्चा के दौरान विपक्षी दलों ने दो से अधिक बच्चों के लिए भी अवकाश बढ़ाने और सरोगेट माँ को भी मातृत्त्व अवकाश के दायरे में लाने की माँग की, लेकिन सरकार ने कहा कि इस प्रावधान को शामिल करना संभव नहीं है। किंतु विधेयक में सरोगेसी के जरिए बच्चा पाने वाली महिलाओं को भी 12 सप्ताह का अवकाश देने का प्रावधान है लेकिन जिस महिला के गर्भ में बच्चा पला, उसके लिए ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जबकि भारत महिलाओं को सर्वाधिक मातृत्व अवकाश देने वाला तीसरे नंबर का देश हो गया है। चर्चा में राज्य सभा की महिला सदस्यों ने मातृत्त्व अवकाश की सीमा नौ माह से एक साल तक करने, शादीशुदा महिलाओं को निजी क्षेत्र में रोजगार देने में हो रहे भेदभाव को दूर करने, पुरुषों को भी पितृत्व अवकाश देने की बात कही ताकि बच्चों की देखभाल की सारी जिम्मेदारी महिलाओं पर नहीं पड़े। आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं, असंगठित क्षेत्र की कामकाजी महिलाओं के लिए भी प्रसूति लाभ की माँग शामिल है जो एक अच्छी पहल कही जा रही है जिसे भविष्य में स्वीकार किया जाना चाहिए। मातृत्व अवकाश की सुविधा इन सभी क्षेत्रों में होनी भी चाहिए जो महिलाओं को आत्म-निर्भर बनाने की दिशा में एक शक्तिशाली कदम होगा। इसके साथ ही बलात्कार पीड़ित महिला को भी तीन माह का मातृत्त्व अवकाश देने की व्यवस्था महिला सशक्तीकरण को सार्थक करने में सहायक रहेगी।

इस सुविधा का विकलांग/दिव्यांग बच्चों के बारे में सोचा गया होता तो, इस व्यवस्था में उनका भी ख्याल रखा गया होता, जिन्हें वास्तव में देखभाल की जरूरत है। मैं यहाँ पर उन बच्चों की बात कर रही हूँ, जो साल के हिसाब से उम्र पार कर गए हैं परंतु वास्तविक उम्र उनकी बहुत कम है अर्थात् जो बच्चे मानसिक और शारीरिक रूप से विकलांग हैं। शारीरिक रूप से विकलांग बच्चों की देखभाल के लिए तो फिर भी कोई व्यवस्था की जा सकती है। परंतु मानसिक रूप से विकलांग बच्चों का क्या? जो विभिन्न परिस्थितियों में अपने माता/पिता के अलावा किसी अन्य के साथ रह भी नहीं सकते हैं। मानसिक रूप से विकलांग (डाउन सिंड्राम) बच्चे जो अपनी वास्तविक उम्र के अनुसार विकसित नहीं हो पाते हैं अर्थात् उनका मानसिक विकास अपनी उम्र से बहुत पीछे या नहीं के बराबर होता है। इस कारण उन्हें देखभाल की आवश्यकता 18 वर्ष के पश्चात् या सारी उम्र भी हो सकती है, परंतु सी.सी.एल. में उम्र की निर्धारित सीमा ने इन बच्चों के माता/पिता अथवा संरक्षक को इस व्यवस्था का लाभ लेने से वंचित कर दिया

है जबकि 18 वर्ष बाद भी इन्हें वास्तव में देखभाल की जरूरत है।

उच्चतम न्यायालय भी एक याचिका में, पोक्सो से जुड़े एक सवाल पर पुनःविचार करने के लिए तैयार हो गया है, जिसमें मानसिक रूप से कमजोर महिला से बलात्कार के लिए कथित आरोपी पर पोक्सो के तहत केस चलाने की अपील की थी। अपील में कहा गया कि ''क्योंकि मानसिक रूप से कमजोर व्यक्ति की मानसिक उम्र (आईक्यू) नाबालिक जैसी होती है इसलिए ऐसे मामलों में पोक्सो के तहत केस चलना चाहिए। यह मामला दिल्ली की एक महिला से जुड़ा है। याचिका पीड़िता की माँ ने दायर की है। उनका कहना है कि उनकी 38 वर्षीय बेटी सेरब्रेल पेल्सी से पीड़ित है और जिस समय उसके साथ यह घटना हुई उसकी मानसिक स्थिति आठ साल की बच्ची के समान थी।'' अदालत ने इस मामले में केंद्र और दिल्ली पुलिस से जवाब माँगा है। यह निर्देश जस्टिस दीपक मिश्रा और शिव कीर्ति सिंह की खंडपीठ ने याचिका पर सुनवाई करते हुए दिए। इसलिए इन बच्चों को भी उम्र की निर्धारित सीमा में नहीं बाँधना चाहिए। यह कैसा न्याय है -- जहाँ संविधान हमें समानता का अधिकार देता है वहीं उम्र की सीमा निर्धारित कर हम उन बच्चों को उनके अधिकार से दूर कर देते हैं जो वास्तव में उन्हें ही मिलना चाहिए था, क्योंकि ऐसे ही बच्चे सी.सी.एल. के वास्तविक हकदार हैं। एक सामान्य बच्चा तो 18 वर्ष से पहले ही इस लायक हो जाता है कि अपनी देखभाल स्वयं कर सकता है अथवा परिवार के अन्य सदस्यों या किसी अन्य के सहारे भी छोड़ा जा सकता है फिर भी इन बच्चों को इस व्यवस्था का पूरा लाभ मिल रहा है। एक सामान्य बच्चा 18 वर्ष से पहले ही वह कौन सा काम है, जो वह नहीं कर सकता है। वह अपनी देखभाल स्वयं करने के साथ परिवार के अन्य कार्य भी पूर्ण जिम्मेदारी से निभा रहा है।

एकल परिवार होने के कारण, जिस परिवार में दिव्यांग/विकलांग बच्चों के साथ ऐसे अकेले माता/पिता रहते हैं जिसके परिवार में कोई अन्य सदस्य भी सहारे के लिए नहीं है उसे सी.सी.एल. के लाभ से इसी कारण वंचित होना पड़ता है, क्योंकि नियमानुसार 18 वर्ष तक ही इस व्यवस्था का लाभ लिया जा सकता है। फिर चाहे 18 वर्ष बाद भी उसका विकलांग बच्चा अपनी देखभाल स्वयं न कर सकें या आजीवन बिस्तर पर रहें या मंदबुद्धि ही क्यों न हो। ऐसे शासनादेशों का क्या लाभ जो वास्तविक और जरूरतमंद बच्चों तक न पहुँच सके। जिन बच्चों को वास्तव में देखभाल की आवश्यकता पूरी उम्र है वह उम्र की निर्धारित सीमा के कारण इस लाभ से वंचित हो जाते हैं। यह कैसी बिडंबना है कि एक एकल माता/पिता के साथ उसका विकलांग/दिव्यांग बच्चा और साथ में अतिवृद्ध माता/पिता रहते हों (जो अकेले उन्हीं की जिम्मेदारी पर हों), तो क्या

यह न्याय होगा उन अभिभावकों के साथ? क्या इन बच्चों के लिए उम्र की निर्धारित सीमा को सी.सी.एल. से समाप्त नहीं किया जा सकता ? क्या इस सी.सी.एल में बदलाव कर इसे परिवार देखभाल अवकाश घोषित नहीं किया जा सकता? जिससे वरिष्ठ नागरिक भी इस व्यवस्था में सम्मिलित हो पाएँगे।

सातवें वेतन आयोग ने एकल पिता (वास्तविक प्रभावित कर्मचारी) को सी.सी.एल. देने की सिफारिश की, जिसे लागू करने के लिए विचार किया जा रहा है। परंतु प्रश्न यह है कि वास्तविक प्रभावित कर्मचारी किसे माना जाएगा? जिसके पास परिवार के किसी भी अन्य सदस्य का सहारा नहीं है या जो अकेले रहता है। किंतु विकलांग/दिव्यांग बच्चों एवं परिवार के अति वृद्ध सदस्यों की देखभाल कर रहे एकल माता/पिता (जिनके सहारे के लिए परिवार का कोई अन्य सदस्य भी नहीं है।) के बारे में कोई विचार करने का कष्ट भी नहीं कर रहा है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने अकेली विवाहित माँ को कर में 50 हजार रुपए की अतिरिक्त छूट देने का प्रस्ताव दिया था जिसे स्वीकार नहीं किया गया। एक तो अकेली महिला जो केवल अपनी कमाई से अपने परिवार की परवरिश कर रही है, उसे अगर अतिरिक्त कर लाभ मिल जाता तो एक ओर उसे आर्थिक रूप से सहारा मिलता तो दूसरी ओर उसे कर छूट मिलने से विशेष स्थान प्राप्त होता। क्या इसी तरह का प्रस्ताव मंत्रालय द्वारा वृद्ध माता/पिता अथवा दिव्यांग बच्चों के साथ रह रहे अकेले माता/पिता के लिए नहीं दिया जा सकता? साथ ही एकल पिता के स्थान पर माताओं के समान सभी पिताओं को अगर इस व्यवस्था में सम्मिलित किया जाता है तो महिलाओं पर पड़ने वाले अतिरिक्त बोझ को भी कुछ कम किया जा सकता है। इस व्यवस्था में पति एवं पत्नी मिलकर आपस में इस अवकाश को बाँट सकते हैं। हम ऐसे शासनादेश क्यों नहीं लागू करते, जिनका लाभ देश के प्रत्येक वास्तविक लाभार्थी को प्राप्त हो सके, कोई भी उससे वंचित न रहे, जो उस योजना को पाने की श्रेणी में आता है।

❑

संदर्भ

1. हिंदुस्तान समाचार-पत्र।
2. दैनिक जागरण समाचार-पत्र।
3. संतोष सिंह, एडवोकेट, उच्चतम न्यायालय, नई दिल्ली।
4. छठे एवं सातवें वेतन आयोग की रिपोर्ट।
5. उच्चतम न्यायालय का याचिका पर दिया गया निर्देश।

डॉ. रणवीर सिंह

मौलाना आजाद और शिक्षा का अधिकार

मौलाना अबुल कलाम आजाद स्वतंत्रता आंदोलन के वरिष्ठ राजनैतिक नेता एवं विद्वान थे। वह सन् 1923 में 35 वर्ष की आयु में ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सबसे कम आयु के युवा अध्यक्ष थे। वह स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री बने और इस पर 15 अगस्त, 1947 से 22 फरवरी, 1958 तक बने रहे। 1992 में उन्हें मरणोपरांत भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' प्रदान किया गया।[1] उन्हें मौलाना आजाद के नाम से जाना जाता है। 'मौलाना' विद्वान व्यक्ति के लिए इस्तेमाल होता है जबकि आजाद उनका 'तखल्लुस' (उपनाम) था। उनका जन्म 11 नवंबर 1888 को हुआ और इस महान शिक्षाविद् व महान सेनानी का 22 फरवरी, 1958 को इंतकाल हो गया।

भारत में शिक्षा की बुनियाद डालने में उनके योगदान के कारण प्रत्येक भारतवासी सदियों तक उन्हें याद करेगा। वर्तमान शिक्षा का अधिकार मौलाना के सपने को सच करता है। हममें से अधिकतर लोग इस तथ्य से अवगत हैं कि मौलाना आजाद स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री बनाए गए थे।[2] शायद कुछ लोग यह भी जानते हैं कि वह भारत के संविधान का प्रारूप तैयार करने वाली संविधान सभा के भी हिस्सा थे। ये दोनों तथ्य तब ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं जब हम भारत में शिक्षा का अधिकार कानून बनाने के इतिहास में उनकी भूमिका की छानबीन करने के लिए बैठते हैं। पहली अप्रैल, 2010 से लागू इस कानून का सौ वर्ष का इतिहास है जिस को बनाने में मौलाना आजाद की प्रमुख भूमिका थी।

इतिहास हमें बताता है कि निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के लिए उस देश का कानून सार्वभौम बुनियादी शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने के लिए माध्यम बना जिन्हें हम आज शैक्षिक रूप से विकसित देश मानते हैं।[3] ब्रिटेन में बच्चों के हालात का विस्तृत विवरण मौजूद है जिसमें बाल श्रम, उनके काम करने की फटे हाल स्थिति तथा वर्गभेद के विवरण शामिल हैं, जिनसे डैविड कोपरफील्ड की गतिविधियों पर प्रमुख उपन्यासकार चार्ल्स डिकेंस ने प्रेरित

होकर उपन्यास लिखा था। वास्तव में ब्रिटेन अनिवार्य शिक्षा कानून, 1870 पास करने वाला यूरोप का अंतिम देश था, जो उस देश में बच्चों की शिक्षा की रूपरेखा में कुछ ही देश में बदलाव लाना की दिशा में प्रभावकारी साबित हुआ।

औपनिवेशिक शक्ति वाले देश में ऐसे विधाई कदम से प्रेरित होकर भारत में ऐसा ही कानून पारित करने की माँग उठने लगी। यह माँग तत्कालीन प्रमुख राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा की जाने लगी। उदाहरण के लिए, भारतीय नेताओं ने भारतीय शिक्षा आयोग, 1882 के माध्यम से जनशिक्षा एवं अनिवार्य शिक्षा कानूनों की अपनी माँगें रखी।[4] वास्तव में बड़ौदा के महराज ने 1883 में लड़कों के लिए अमरेली तालुक में अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था लागू की जिसका 1906 में राज्य के बाकी हिस्सों में भी विस्तार किया गया। उसी साल गोपालकृष्ण गोखले ने इंपरीयिल लेजिस्लेटिव कौंसिल से यह आग्रह किया कि निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा व्यवस्था लागू की जाए। उन्होंने जो तर्क दिया था वह इस प्रकार है :

''मैं परिषद् के विचार के लिए निम्नलिखित प्रस्ताव पेश करना चाहता हूँ....सरकार को इस देश में जनशिक्षा के संबंध में वही जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए, जो अति सभ्य देशों में पहले से ही निभाई जा रही है, इसलिए सुविचारित योजना बनाई जानी चाहिए और उसे पास किए जाने तक उस पर अमल किया जाना चाहिए। लाखों बच्चों की भलाई इसी पर निर्भर है जो प्रभावकारी शिक्षा की बाट जोह रहे हैं...।''[5]

गोखले ने 18 मार्च, 1910 को प्राइवेट मैंबर्स बिल इंपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल में पेश किया था, जिसमें भारत में निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के प्रावधान का आग्रह किया गया था। बिल को अमान्य कर दिया गया। प्रयास जारी रहा और 1917 में विट्ठल भाई यह बिल पास कराने में सफल हो गए जो अनिवार्य शिक्षा का प्रथम कानून बना। यह पटेल एक्ट के नाम से चर्चित रहा। 1930 तक ब्रिटिश भारत के प्रांत की कानूनी किताब में अनिवार्य शिक्षा कानून शामिल रहा हालाँकि कोष के अभाव में यह ज्यादा व्यवहार में नहीं रहा। हर हाल में अनिवार्य शिक्षा की जवाबदेही बच्चों के अभिभावकों की रही। रिकॉर्डो से पता चलता है कि स्कूलों में अपने बच्चों को नहीं भेजने पर कुछ रुपयों एवं आनों में जुर्माना किया जाता था जिससे धन जमा होता था। हरलोग कमेटी द्वारा 1930 में इस गैर-प्रभावी कानून को नकार दिया गया। कमेटी ने मात्रात्मक शिक्षा की जगह गुणात्मक शिक्षा पर जोर डाला, क्योंकि इससे देश में प्राथमिक शिक्षा के प्रसार में अड़चनें पैदा होती थीं।[6]

महात्मा गांधी ने 1937 में सार्वभौम प्राथमिक शिक्षा लागू करने का आह्वान किया। कहा गया कि उसके लिए धन का अभाव है। अपनी 67 वर्ष की उम्र में गांधीजी ने

जनशिक्षा संबंधी क्रांतिकारी प्रस्ताव किया जो उनके विचार से भारत के लिए उपयुक्त था। यह बहस का विषय रहा कि क्या काम पर आधारित शिक्षा लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए ठीक थी ताकि व्यापक शिक्षा के लिए धन देने में सरकार की असमर्थता से उत्पन्न निराशा के भाव को खत्म किया जा सके। सार्वभौम शिक्षा के लिए पर्याप्त वित्तीय मदद के उनके तर्क पर सरकार का जवाब मिला कि शराब की बिक्री से प्राप्त राजस्व का उपयोग इसके लिए किया जाए। इसका मतलब यह था कि वह मद्य निषेध अथवा सरकार की मदद से सार्वभौम शिक्षा की व्यवस्था की माँग छोड़ दें। इसका उन्होंने बड़ा सरल जवाब दियाः नए सुधार की यह क्रूरतम विडंबना इस तथ्य में निहित है कि अपने बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए हमारे पास शराब से प्राप्त राजस्व के अलावा कोई विकल्प नहीं है ऐसा लगता है।[7] इसने गाँधीजी को ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का प्रस्ताव पेश करने पर मजबूर किया जिसमें अपने बल पर शिक्षा की व्यवस्था की जाए... ''इसलिए मैं उपयोगी हस्तशिल्प की शिक्षा देकर बाल शिक्षा शुरू करना चाहता हूँ। इस तरह हर स्कूल को आत्म-निर्भर बनाया जा सकता है, शर्त यही है कि सरकार इन स्कूलों के उत्पाद को खरीद ले।'' 1942 में जाकिर हुसैन की अध्यक्षता में गठित कमेटी ने गांधीजी के प्रस्ताव के अनुरूप नई तालीम की रूपरेखा तैयार की।

1947 में संविधान सभा ने उपाय एवं साधन संबंधी (खेर) कमेटी गठित की। इसका मकसद कम लागत पर दस साल के भीतर सार्वभौम प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को पूरा करने के लिए तौर तरीके एवं साधन का पता लगाना था। उसी साल संविधान सभा की मौलिक अधिकार संबंधी कमेटी ने निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकारों की सूची में डाल दिया। 'खंड 23' हरेक नागरिक को निःशुल्क शिक्षा पाने का अधिकार देता है और सरकार का यह कर्त्तव्य है कि इस संविधान के लागू होने के बाद से 10 साल की अवधि के भीतर वह 14 साल तक के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करे।[8]

अप्रैल, 1947 में संविधान सभा की सलाहकार समिति ने निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार मानने से मना कर दिया (इसका कारण इसकी लागत को बताया गया।) बाद में इसे राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में रखा गया।

1949 में संविधान सभा में बहस के दौरान सभा ने खंड 36 की प्रथम पंक्ति को काट दिया जो इस प्रकार थी, ''प्रत्येक नागरिक को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा पाने का अधिकार है और यह राज्य का कर्त्तव्य है कि...'' और इसकी जगह 'राज्य यह प्रयास करेगा कि...' जहाँ तक नीति निर्देशक सिद्धांत तय करने के लिए उम्र-समूह और अंतिम मसौदे से 'प्राथमिक शिक्षा' शब्द हटाने का सवाल था, यह संविधान सभा के अध्यक्ष बाबा साहब भीमराव अंबेडकर के हस्तक्षेप से संभव हुआ, जिन्होंने 23 नवंबर,

1949 को कहा, अनुच्छेद 18 में यह प्रावधान किया गया है कि 14 साल से कम उम्र के बच्चों को काम पर लगाने से रोका जाए। स्पष्ट है कि 14 साल से कम उम्र के बच्चे को काम पर नहीं लगाया जाएगा। इस हस्तक्षेप के अलावा अंतिम मार्ग नीति निर्देशक सिद्धांत 45 में '14 साल की उम्र की बजाय 11 साल की उम्र तक' की बात है। इस दौरान और इसके बाद मौलाना आजाद द्वारा सार्वजनिक रूप से जो कुछ कहा गया उससे किसी को यह आभास नहीं हुआ कि वह क्या कर रहे हैं और उनके प्रयासों को वे लोग किस तरह विफल करने में लगे हैं जो नेहरू मंत्रि मंडल में वित्त व्यवस्था को नियंत्रित कर रहे थे तथा नेहरू ने उन्हें कितना समर्थन दिया था।[9] उदाहरण के लिए 1950 में संविधान से यह अधिकार हटाए जाने के बाद भी 30 सितंबर, 1953 को रेडियो प्रसारण में उन्होंने साफ-साफ कहा था कि वह संविधान में ऐसा प्रावधान जुड़वाने में समर्थ नहीं हुए जो इस प्रकार है :--

"हरेक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है जो उसे अपनी फैकल्टी का विकास करने और पूर्ण जीवन जीने में समर्थ बनाती है। ऐसी शिक्षा हर व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है। जब तक कोई सरकार ज्ञान प्राप्त करने का साधन हरेक व्यक्ति को उपलब्ध नहीं कराती है वह अपने कर्त्तव्य पालन का दावा नहीं कर सकती। हरेक व्यक्ति को बिना शर्त और बिना पूर्व अर्हता (क्वालिफिकेशन) के इस चरण तक की शिक्षा पाने का अधिकार है...। सरकार को माध्यमिक स्तर तक शिक्षा सुविधाएँ सभी नगारिकों को उपलब्ध करानी होगी। प्राथमिक एवं मिडल स्तर की शिक्षा की इमारत इन्हीं दो चरणों में खड़ी की जाती है। यदि बुनियाद कमजोर अथवा गलत होगी तो बाकी का ढाँचा भी कमजोर अथवा दोषपूर्ण होगा।"

अति विलंब से प्राप्त अधिकार

यह विडंबना है कि शिक्षा का अधिकार कानून भारत में तब वास्तविकता में लागू हुआ जब अनेक तर्क-वितर्क के बावजूद राजनीति मौलाना आजाद के समय की तुलना करने के प्रति अनिच्छुक रही। निम्नलिखित तर्क दिए गएः जब मौलाना आजाद भारत की शिक्षा व्यवस्था का नेतृत्व कर रहे थे उस समय राष्ट्रवादी विचारधारा अपने चरम पर थी। इस तथ्य के मद्दे नजर कि राजनीतिक झुकाव पर नेहरूवादी समाजवाद हावी था, अधिकार आधारित सोच अपनाने की अधिक गुंजाइश थी। वर्तमान समय में निजीकरण एवं उदारीकरण की नीतियाँ हावी हैं। हमारी अर्थव्यवस्था का द्वार एक नीतिगत ढाँचा बनाकर 1990 के दशक में सबके लिए खोल दिया गया था। यह नीतिगत ढाँचा बाजार के समाधान का पक्षधर है यहाँ तक कि सामाजिक क्षेत्र में भी अधिकार पर आधारित सोच के विपरीत सरकार के दायित्वों की यह नीति हावी है। इस तरह गोपालकृष्ण गोखले, महात्मा गांधी, बाबा साहब अंबेडकर, नेहरू एवं मौलाना आजाद जैसे बड़े नाम अंततः

डॉ. मनमोहन सिंह के समय तक सरकार का अपने दायित्वों की अपेक्षा बाजार के हस्तक्षेप की नीति के प्रति ज्यादा झुकाव रहा।

अंत में कोई भी इस निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि आजादी के बाद किसी भी राष्ट्रीय नेता का सार्वजनिक कथन उनके कदम के अनुरूप नहीं रहा, खासकर सार्वभौम बुनियादी शिक्षा के मामले में। यहाँ तक कि कोठारी आयोग की रिपोर्ट पर भी वैसा ही आरोप लगा, क्योंकि सामान्य स्कूलों की अति प्रशंसित समतावादी सोच उसकी सिफारिशों के अनुकूल नहीं थी। उसमें मौलाना आजाद के 'नेशनल सिस्टम ऑफ एजुकेशन' की शब्दावली का प्रयोग किया गया है। मौलाना आजाद की तरह माँग एवं अमल संबंधी दिशा-निर्देश काफी शिथिल एवं हतोत्साहित करने वाला है।[11]

❑

संदर्भ

1. कांग्रेस संदेश, विनोद रैना, फरवरी 2015, पृष्ठ 23 चार दिशाएँ प्रिंटर्स जी-40 सेक्टर 3, नोएडा।
2. कांग्रेस संदेश, विनोद रैना, फरवरी 2015, पृष्ठ 22, चार दिशाएँ प्रिंटर्स जी-40 सेक्टर-3, नोएडा।
3. India Wins Freedom, Maulana Abul Kalam Azad 1959, Orlent Longmans Bombay Calcutta Madras Delhi, page 121
4. India Wins Freedom, Maulana Abul Kalam Azad 1959, Orlent Longmans Bombay Calcutta Madras Delhi, page 122
5. India Wins Freedom, Maulana Abul Kalam Azad 1959, Orlent Longmans Bombay Calcutta Madras Delhi, page 180
6. इंडिया टुडे, नवंबर 1998, पृष्ठ 17
7. कांग्रेस संदेश, नवंबर 2010, पृष्ठ 35
8. मौलाना अब्दुल कलाम स्मरण, नवंबर 1999, पृष्ठ 20
9. मौलाना अब्दुल कलाम स्मरण नवंबर 1999, पृष्ठ 18
10. कांग्रेस संदेश, विनोद रैना, मौलाना अब्दुल कलाम स्मरण, नवंबर 1999, पृष्ठ 20
11. कांग्रेस संदेश, विनोद रैना, फरवरी 2015, पृष्ठ 122, चार दिशाएँ, प्रिंटर्स जी-40, सेक्टर-3, नोएडा

सुख देव रेबारी

हरियाणा मानव अधिकार आयोग : गठन एवं उपलब्धियाँ

मानव अधिकार मानव की स्वतंत्रता का पुनीत अधिकार है, आज मानव के लिए सार्थक, गरिमायुक्त, सम्मानजनक, स्वस्थ्य और कल्याणकारी जीवन के लिए आवश्यक है। मानव अधिकार शब्द का प्रादुर्भाव प्राचीन काल से हैं। प्राचीनकाल में इन अधिकारों को 'मानव अधिकार' नाम से संबोधित नहीं किया जाता था, परंतु बीसवीं शताब्दी में दो विश्व युद्धों की विभीषिका ने अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को मानव गरिमा, बंधुत्व, प्रेम, सदाचार, सहयोग तथा सौहार्द्रपूर्ण जीवन के प्रति अग्रसर किया।

मानव अधिकार

मानव अधिकार प्रत्येक व्यक्ति के ऐसे मूलभूत अधिकार हैं, जो किसी भी मनुष्य के लिए सामान्य जीवन जी सकने के लिए आवश्यक होते हैं। मानव अधिकारों का लक्ष्य प्रत्येक व्यक्ति को समाज में सभी के साथ सहजता और खुशी के साथ जीवन व्यतीत करने के लायक बनाना है। मानव अधिकार वास्तव में वे सभी अधिकार हैं जो किसी को भी मानव होने के नाते मिलने चाहिए। सभी व्यक्तियों को भूख, बीमारी, लाचारी, कुपोषण, दमन से सुरक्षा चाहिए। सभी को घर, नौकरी तथा समाज में शांतिपूर्ण ढंग से रहने और काम करने हेतु संरक्षण चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को यह सब मिले और वह मानवीय गरिमा के साथ समानता एवं स्वतंत्रतापूर्वक जी सके, यही मानव अधिकार हैं।

मानव अधिकार की वर्तमान अवधारणा

''जीवन का अवसर मिले, पर जीवन जीने का उपाय ना मिले या इसमें बाधा आए तो उस अवसर का कोई अर्थ नहीं होता। शिक्षा, स्वास्थ्य तथा रोजगार के अवसर जो जीवन के अधिकार के वास्तविक अर्थ को परिभाषित करते हैं, वे सब प्रत्येक मानव को अनेकानेक कारणों से नहीं मिल पाते। विकास के नाम पर अंधी दौड़ में मानव

अधिकारों की अवहेलना और उनकी स्थापना में अनेक अड़चनें आती हैं। किसी भी समाज या व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए यह ज़रूरी है कि उसके लिए निर्धारित नियमों का पालन सभी के द्वारा ईमानदारी से किया जाए। देश में व्यापक गरीबी, शिक्षा की दयनीय हालत, आपराधिक गतिविधियाँ, भ्रष्टाचार, भेद-भाव, अज्ञानता, अंधविश्वास इस बात का द्योतक है कि देश में सभी को समान रूप से मानव अधिकार उपलब्ध नहीं हो पाए है और हम प्रत्येक मानव को गरिमापूर्ण जीवन, आज़ादी एवं समानता के साथ रहकर उसकी समाज और देश के उत्थान में समुचित रूप से भागीदारी सुनिश्चित नहीं कर पा रहे हैं।''[1]

हरियाणा मानव अधिकार आयोग का गठन[2]

हरियाणा सरकार द्वारा गृह-विभाग की 20 सितंबर, 2012 को जारी की गई अधिसूचना संख्या एस.ओ. 67/सी.ए. 10 के अंतर्गत हरियाणा में मानव मानव अधिकार आयोग का गठन किया गया है जिसमें न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन (पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश) को इस आयोग का प्रथम अध्यक्ष बनाया गया था।

न्यायमूर्ति श्री एच.एस. भल्ला (पूर्व न्यायाधीश पंजाब एवं हरियाणा, उच्च न्यायालय एवं उड़ीसा उच्च न्यायालय) आयोग के वर्तमान में कार्यकारी अध्यक्ष है तथा श्री जे. एस. अहलावत, आई.ए.एस. (सेवानिवृत्त) इस आयोग के सदस्य मनोनीत किए गए हैं।

शिकायत निवारण एवं जाँच[3]

- आयोग पीड़ित द्वारा या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अथवा किसी न्यायालय के निर्देश या आदेश पर हिंदी अथवा अंग्रेजी भाषा में शिकायत प्राप्त कर सकता है या फिर पीड़ित व्यक्ति स्वयं आयोग के कार्यालय में आकर अपनी शिकायत दे सकता है या पोस्ट, फैक्स अथवा ई-मेल से भी अपनी शिकायत निःशुल्क भेज सकता है।
- शिकायतों के लिए कोई शुल्क नहीं लिया जाता है। अपनी शिकायत के संबंध में सूचना प्राप्त करने के लिए कोई भी आवेदक आयोग के कार्यालय से संपर्क कर सकता है।
- सभी शिकायतों पर कार्यवाही राज्य मानव अधिकार आयोग के विधि विभाग द्वारा की जाती है। शिकायत प्राप्त होने पर शिकायत का ब्यौरा दर्ज करके उन पर फाईल संख्या दी जाती है और शिकायतकर्ता को पावती भेजी जाती है।
- 'हरियाणा मानव अधिकार आयोग' मानव अधिकारों के उल्लंघन की शिकायतों पर संबंधित अधिकारियों को नोटिस भेजता है और उनसे विस्तृत रिपोर्ट मँगवाता है

या आयोग के जाँच विभाग के अधिकारियों के दल द्वारा घटनास्थल पर जाकर तथ्यों की जाँच करने का अधिकार रखता है।

- आयोग शिकायतों का निपटारा करने के लिए संबंधित अधिकारियों को आवश्यक कार्यवाही करने के निर्देश दे सकता है। उसे दीवानी न्यायालय की तरह गवाहों को बुलाने, उन्हें हाज़िर करवाने, शपथ-पत्र पर उनका परीक्षण करने, किसी दस्तावेज का पता लगाने और उन्हें पेश करने व गवाहों या दस्तावेजों की जाँच के आदेश जारी करने का अधिकार है।
- अगर जाँच के पश्चात् आयोग को पता चले कि मानव अधिकारों का उल्लंघन हुआ है या मानव अधिकारों के उल्लंघन को रोकने में सरकारी कर्मचारी द्वारा लापरवाही की गई है तो आयोग राज्य सरकार को सिफारिश कर सकता है कि शिकायतकर्ता या पीड़ित को या उसके परिवार के सदस्यों को मुआवज़ा या क्षतिपूर्ति दे और संबंधित व्यक्तियों के खिलाफ मुकदमा या अन्य कोई उचित कानूनी कार्यवाही करे, जिसे आयोग उपयुक्त समझता है।

हरियाणा मानव अधिकार आयोग की उपलब्धियाँ[4] : सेमिनार और वर्कशॉप

(1) हरियाणा मानव अधिकार आयोग ने मानव अधिकारों के प्रति समर्पित होकर राज्य के अधिकारों एवं कर्मचारियों को अच्छा जनसेवक बनकर जनता के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने में जागरुक करने के लिए पहला सेमिनार 13 जुलाई, 2013 को सेक्टर-5 पंचकुला में इंद्र धनुष सभागार में आयोजित किया।

(2) दूसरा सेमिनार 6 नवंबर, 2013 को नगर निगम सभागार एन.आई.टी. फरीदाबाद में न्यायमूर्ति श्री के.जी. बालाकृष्णन, पूर्व अध्यक्ष, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग नई दिल्ली एवं पूर्व मुख्य न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय भारत नई दिल्ली की अध्यक्षता में पुलिस विभाग के उच्च अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए आयोजित किया।

(3) इसी प्रकार 29 अगस्त, 2013 को पॉवर ग्रीड कॉरपोरेशन सेक्टर-43, गुड़गाँव में पूर्व मुख्यमंत्री हरियाणा की अध्यक्षता में पहला तथा 18 दिसंबर, 2013 को कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र के सभागार में महामहिम श्री जगन्नाथ पहाड़िया पूर्व राज्यपाल हरियाणा की अध्यक्षता में राजस्व विभाग के कर्मचारियों एवं अधिकारियों के लिए दूसरा सेमीनार आयोजित किया।

इस प्रकार आयोग चार सेमिनार पुलिस एवं राजस्व विभाग के कर्मचारियों एवं अधिकारियों के लिए सफलतापूर्वक आयोजित कर चुका है।

उपरोक्त सेमिनार से पुलिस, कर्मचारियों एवं अधिकारियों में निश्चित तौर पर मानव अधिकारों के प्रति जागृति बढ़ेगी जिससे हरियाणा की आम जनता के मानव अधिकारों

के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे साथ ही मानवीय मूल्यों एवं विश्वास में सुदृढ़ता को बढ़ावा मिलेगा। निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि मानव अधिकारों का बेहतर संरक्षण तभी संभव है जब कर्मचारियों एवं अधिकारियों को मानव अधिकारों के प्रति सचेत एवं सर्तक बनाया जाए और जनता की सहभागिता भी बनी रहे।

मानव अधिकारों की जागृति अभियान के अंतर्गत **पहली वर्कशाप** हिसार, भिवानी, फतेहबाद, सिरसा तथा जींद जिलों में 9 जनवरी, 2015 को गुरु जम्भेश्वर विश्वविद्यालय हिसार के चौधरी रणबीर सिंह सभागार में न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन की अध्यक्षता में संपन्न हुई। इस वर्कशाप में न्यायमूर्ति श्री एच.एस. भल्ला एवं श्री जे.एस. अहलावत सदस्य आयोग भी शामिल हुए।

दूसरी वर्कशाप रेवाड़ी, महेंद्रगढ़ तथा गुड़गाँव जिलों में दिनांक 20 मार्च, 2015 को रेवाड़ी शहर स्थित के एल.पी. कालेज सभागार में न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन की अध्यक्षता में, **तीसरी वर्कशाप** रोहतक, झज्जर, सोनीपत तथा पानीपत जिलों में 15 मई, 2015 को एम. डी.यू. रोहतक के टैगोर सभागार में न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

चौथी वर्कशाप फरीदाबाद, पलवल, मेवात जिलों में 14 जुलाई, 2015 को नगर निगम सभागार एन.आई.टी. फरीदाबाद में हुई। न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन ने बतौर अध्यक्ष वर्कशाप की अध्यक्षता की और आम जनता के लिए इस वर्कशाप को सफलतापूर्वक आयोजित कर मानव अधिकारों के प्रति जागरुक किया। **पाँचवी वर्कशाप** 19 दिसंबर, 2015 को करनाल में राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान के डॉ. डी. सुंदरसैन सभागार में की।

निरीक्षण एवं अन्य कार्य

आयोग ने सेमीनार एवं वर्कशाप द्वारा मानव अधिकारों के प्रति जागृति के साथ-साथ गाँव अटाली में कई महीनों से चले आ रहे सांप्रदायिक झगड़े को लेकर गंभीरता दिखाते हुए दोनों पक्षों में आपसी भाईचारा एवं शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिए न केवल प्रयास किए बल्कि दोनों पक्षों को शांति से रहने की अपील की और सरकार को समय पर उचित दिशा निर्देश देकर मानव अधिकारों की पालना में समाज एवं राज्य के प्रति अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन किया।

आयोग ने जिला कारागार का भी निरीक्षण किया और बंदियों की सफाई व्यवस्था व उनकी प्रतिदिन की समस्याओं के समाधान हेतु बहुमूल्य सुझाव जेल प्रशासन को मौके पर ही देकर बंदियों के मौलिक अधिकारों के संरक्षण की दिशा में कल्याणकारी कदम उठाए।

जिलों के बाल-गृह आदि का भी आयोग ने निरीक्षण करके उपस्थित अधिकारियों को उचित दिशा निर्देश दिए। हरियाणा मानव अधिकार आयोग ने 8 जनवरी, 2015 को जिला हिसार में, 19 मार्च, 2015 को जिला रेवाड़ी 14 मई 2015 को जिला रोहतक तथा 13 जुलाई, 2015 को जिला फरीदाबाद में, 18 सितंबर, 2015 को शहर करनाल में उपायुक्त कार्यालय में शिकायतकर्ता पीड़ित व्यक्तियों के लिए उनके नजदीकी जिलों में जाकर उनकी समस्याओं का समाधान करने के लिए कोर्ट भी आयोजित कर चुका है।

हरियाणा मानव अधिकार आयोग द्वारा हरियाणा भवन, नई दिल्ली में महीने में दो बार कोर्ट लगाना

हरियाणा मानव अधिकार आयोग से संबंधित दक्षिण हरियाणा के लोगों को अपनी शिकायतों के समाधान हेतु दूर से चंडीगढ़ में आना पड़ता था। इन क्षेत्र के लोगों ने माननीय अध्यक्ष से निवेदन किया कि उन्हें बहुत दूर से आना पड़ता है इसलिए आयोग की कोर्ट दक्षिण हरियाणा में किसी स्थान पर लगाकर हमारी समस्याओं का समाधान करे। आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन ने दक्षिण हरियाणा के 6 जिलों गुड़गाँव, फरीदाबाद, पलवल, मेवात, नारनौल/ महेंद्रगढ़ तथा रेवाड़ी के लोगों के निवेदन को स्वीकारते हुए जनहित में हरियाणा भवन, नई दिल्ली में महीने में दो बार कोर्ट लगाने की स्वीकृति दी है। आयोग का दक्षिण हरियाणा के लोगों के लिए जनहित में उठाया गया यह एक कल्याणकारी कदम है।

हरियाणा मानव अधिकार आयोग
राज्य आयोग की स्थापना से लेकर अब तक
(नवंबर 2012 से अगस्त 2016) प्राप्त मामलों की स्थिति

क्रम	वर्ष (जनवरी से दिसंबर)	नए प्राप्त मामले	निपटाए मामले
1.	2012 (नवंबर, दिसंबर)	56	21
2.	2013	1088	448
3.	2014	1475	970
4.	2015	2086	1873
5.	2016	2178	1637
	कुल	**6883**	**4949**

स्रोत : हरियाणा मानव अधिकार आयोग की बेवसाइट पर उपलब्ध आँकड़ों से संकलित डाटा।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग द्वारा हरियाणा राज्य के वित्तीय वर्षवार पंजीकृत एवं निपटाए गए मामलों को दर्शाने वाला विवरण
(1 अप्रैल, 2006 से 31 मार्च, 2012 तक)

क्रम	वित्तीय वर्ष	पंजीकृत मामले	निपटाए मामले
1.	2006-07	3199	3496
2.	2007-08	3686	3676
3.	2008-09	आँकड़े संख्या उपलब्ध नहीं	3782
4.	2009-10	2921	3015
5.	2010-11	3322	3405
6.	2011-12	4175	3939
कुल योग		**17303 (2008-09 के आँकड़े सम्मिलित नहीं)**	**21313**

स्रोत : राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की वार्षिक रिपोर्ट पर आधारित संकलित आँकड़े।

निष्कर्ष

हरियाणा मानव अधिकार आयोग स्थापना से मानव अधिकारों के संरक्षण के प्रति निरंतर सक्रिय है। इस हेतु विभिन्न अधिकारियों एवं कर्मचारियों की सेमीनार, वर्कशॉप द्वारा जनजागृति का कार्य किया। आयोग ने समय-समय पर विभिन्न स्थानों पर जाकर निरीक्षण किया जिससे मानव अधिकारों के संरक्षण एवं हनन की वास्तविक स्थिति का पता लगाया और ऐसे मामलों का निस्तारण समय पर किया गया। आयोग की स्थापना के बाद परिवादों में निरंतर वृद्धि हुई है, साथ ही आयोग ने तत्परता पूर्वक परिवादों का त्वरित निपटारा करने में सक्रियता को दर्शाया, जिस से आम जनता में आयोग के प्रति विश्वास एवं साख कायम हुई है।

❑

संदर्भ

1. हरियाणा मानव अधिकार आयोग(प्रक्रिया) विनियम, 2012
2. मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993
3. हरियाणा मानव अधिकार आयोग द्वारा प्रकाशित पैंफलेट
4. न्यायमूर्ति श्री विजेंद्र जैन, अध्यक्ष हरियाणा मानव अधिकार आयोग।
5. धारा 21, मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993

कहानी

डॉ. जसपाली चौहान

भाग्य लक्ष्मी

अरूण और दीपा, दोनों ही पढ़े-लिखे संभ्रांत परिवार से है। दोनों के दो वर्ष की एक कन्या भी है -- सलोनी। अरूण सहकारी बैंक में नौकरी करता है और दीपा आदर्श पत्नी की तरह घर पर ही रहती है। पति-पत्नी की आशा केंद्र एकमात्र सलोनी है। अपनी पाँचवीं मैरिज एनीवर्सरी मनाने में कल वे इतना व्यस्त थे कि किसी दूसरे काम के विषय में सोच भी नहीं सकते थे। उससे पहले कई दिनों से वर्षा रुकने का नाम नहीं ले रही थी। भाद्रपद माह जो ठहरा। वैसे तो आज भी अरूण भागदौड़ से मुक्त नहीं है। शहरी जीवन में तो फुर्सत नाम की चिड़िया मानो फुर्र ही हो जाती है। कई दिनों बाद आज मौसम भी साफ है। अरूण की पत्नी ने पिछले माह बताया था -- ''मैं गर्भवती हो गई हूँ, इसलिए डॉक्टर के यहाँ जाकर समय रहते इसे कन्फर्म करा लें तो ज्यादा अच्छा रहेगा।''

अरूण चाहता था कि प्रेग्नैंसी कन्फर्म होने के साथ-साथ यदि किसी प्रकार गर्भ का लिंग भी ज्ञात हो जाए तो अच्छा है। अतः अरूण ने दीपा से कहा, ''दीपा जल्दी से तैयार हो जाओ, हमें डॉ. रूचिका के यहाँ जाना है। आज मौसम भी ठीक है, टैस्ट के बाद मैं उधर से ही बैंक निकल जाऊँगा।'' दीपा सहमति जताते हुए जल्दी-जल्दी तैयार हो गई। वह सलोनी को साथ लेकर गाड़ी से क्लिनिक पहुँच गए।

डॉ. अर्पणा ने प्रेग्नेंसी टैस्ट कराने हेतु फीस जमा करा दी। टैस्ट हुआ और वे दोनों टैस्ट रिपोर्ट लेकर डॉ. रूचिका के पास पहुँचे। सब कुछ पता होते हुए भी वे अंजान से बनकर डॉ. के पास पहुँचे। रिपोर्ट को देखते ही डॉ. ने पाजिटिव बताया। दोनों के माथे पर चिंता और व्यग्रता की रेखा खिंच गई। डॉ. रूचिका उनकी फैमिली डॉक्टर भी थीं। अतः उन्होंने धीरे से लिंग निर्धारण टैस्ट की बात की, परंतु डॉ. ने इस टैस्ट से इंकार करते हुए समझाया -- ''देखिए! मिस्टर अरूण आप पढ़े-लिखे

समझदार व्यक्ति हैं, आप जानते हैं कि यह टैस्ट गैर-कानूनी है। इस टैस्ट की किसी को भनक भी लग गई तो आप भी फंसेंगे और हमारी भी बदनामी होगी।'' काफी अनुनय-विनय करने पर भी बात नहीं बनी।

आज तो अरूण और दीपा भारी मन से घर वापिस लौट आए पर उन्होंने अपना मन नहीं बदला क्योंकि वंश-बेल चलाने के लिए उन्हें कम-से-कम एक बेटे की सख्त आवश्यकता थी। अरूण से दीपा ने कहा, ''मैं अकेली ही कल डॉ. के पास जाऊँगी। थोड़ा एक्टिंग भी करके देखूँगी, यदि फिर भी बात न बनीं तो कुछ लेन-देन की बात करती हूँ।'' अरूण को यह प्रस्ताव अच्छा लगा, उसने कहा, ''हाँ! यह ठीक रहेगा। लेकिन ख्याल रखना कि कहीं चिढ़ न जाए। अगर उसने पुलिस बुला दी तो मामला भारी पड़ जाएगा, लेने के देने पड़ जाएँगे। वैसे तुम खुद समझदार हो मौके को समझकर काम करना और दस-पंद्रह हजार तक की भी बात हो तो मौके से मत चूकना।''

अगले दिन दीपा तैयार होकर क्लिनिक थोड़ा देर से पहुँची है ताकि डॉ. से आराम से बात हो सके क्योंकि उस समय तक आरंभिक भीड़ लगभग समाप्त हो गई थी। इक्का-दुक्का रोगी ही आ रहे थे। वह अवसर दीपा के लिए एकदम सही था। वह डॉ. रूचिका के केबिन में ज्यों ही घुसी, उसका मंतव्य समझते डॉ. रूचिका को देर न लगी। उसने दीपा से कहा, ''मैडम दीपा! मैं आपकी बहुत इज्जत करती हूँ, अगर कल वाले काम से आप यहाँ आई हो तो -- 'सॉरी'। और हाथ जोड़ दिए। दीपा को लगा -- अभिनय के बिना यहाँ काम नहीं चलेगा, ये भी सही। दीपा 'सॉरी' शब्द सुनते ही रो पड़ी, आँखों में आँसू ला कर दोनों हाथ जोड़ते हुए, काँपते हुए स्वर में बोली -- डॉ. मैम! हमारे पास एक लड़की है, लड़का नहीं है, घर में सास-ससुर जो-जो ताने मारते हैं, उनके बारे में क्या बताऊँ। कभी-कभी तो इन सबसे अरूण भी बहुत परेशान हो जाते हैं कि घर में बेवजह क्लेश हो जाता है। अगर एक लड़का हो जाए तो सबका मुँह बंद हो जाएगा। डॉ. रूचिका कुछ पसीज गई और उसकी आँखों में लालच तैरने लगा। दीपा ने मौके की नजाकत को समझा और लिंग परीक्षण के लिए आवश्यक धन और किसी को ना बताने की शर्त पर तैयार हो गई। डॉ. ने लिंग परीक्षण करके बताया कि आपके गर्भ में स्वस्थ कन्या विकसित हो रही है। यह सुनते ही दीपा का चेहरा सफेद पड़ गया, शरीर में काटो तो खून नहीं। तभी उसने डॉ. रूचिका से गर्भपात कराने की बात कही। लेडी डॉक्टर भड़क पड़ी -- ''अँगुली पकड़कर पहुँचा मत पकड़ो।'' यह कार्य मैं हरगिज नहीं करूँगी। डॉक्टर के लाख मनाने पर भी वह बेशर्मी से अपनी जिद्द पर अड़ी रही और कहने लगी --- लिंग परीक्षण का क्या लाभ? गोद में लड़की ही खिलानी थी तो लिंग परीक्षण पर

धन खर्च करने का क्या फायदा? अब चाहे आप कुछ भी करें। परीक्षण आपने किया है तो ऑपरेशन भी आप ही करेंगी। बेशक ऑपरेशन के मुँह माँगे पैसे ले लीजिए। अंत में विवश होकर डॉक्टर को दस हजार रुपए और किसी को न बताने की शर्त पर गर्भपात के ऑपरेशन के लिए तैयार होना पड़ा। समय न गँवाते हुए दीपा ने अरूण को दस हजार रुपए लेकर अस्पताल बुलवा लिया और गर्भपात करवा दिया गया। उसके बाद डॉ. रूचिका ने अरूण को डाँटते हुए -- 'मिस्टर अजय! आप भविष्य में इस बात का ध्यान रखें कि यदि आपको संतान नहीं चाहिए तो सावधानी बरतें। आज विज्ञान का युग है, साधनों की कोई कमी नहीं है। आप जानते हैं कि भ्रूण पहचान और हत्या दोनों ही कानूनन अपराध हैं। न खुद ही ये पाप करें न ही हम से ये पाप कराएँ। डॉक्टर ने घर जाने से पहले दीपा को कुछ सावधानियाँ बताई और चली गई। दीपा और अरूण अब खुश थे और खुश थे कि सारा मामला चुपचाप और सही सलामत हो गया।

धीरे-धीरे समय बीतता गया अचानक एक दिन दीपा की तबियत बहुत ज्यादा खराब हो गई और उसको बच्चादानी में कैंसर हो गया। काफी इलाज हुआ, अच्छे-से-अच्छे इलाज के बावजूद बड़ी मुश्किल से उसकी जान बच पाई पर इन सब में घर की जमा पूँजी लगभग खत्म हो गई और घर में दरिद्रता का वास हो गया। लाखों रुपए कर्ज सिर पर जमा थे। दोनों बहुत परेशान रहने लगे। दीपावली का त्यौहार नजदीक था, पर दोनों लेनदारों से परेशान थे। पास-पड़ोस में दीपावली की सजावट को देखकर सलोनी भी घर में बड़ी तैयारियों की जिद्द करती है। जैसे-तैसे दीपावली वाले दिन खूब अच्छे तरीके से सजावट की जाती है और घर में लक्ष्मी, गणेश की पूजा की तैयारी की जाती है और पूजा में लक्ष्मी-गणेश से दोनों प्रार्थना करते हैं कि हे माँ! हमें सभी प्रकार से, धन-धान्य से, ऋद्धि-सिद्धि, वैभव-सम्मान, यश-कीर्ति सभी से संपन्न करो। हे माँ! हमारे घर में निवास करो। पूजा के बाद दीप-प्रज्ज्वलित करके, मिठाई बाँटी, पटाखे छोड़े, भोजन किया और इसी गहमागहमी में रात्रि एक बजे सो गए।

प्रातःकाल अरूण बहुत परेशान था। उसकी परेशानी को देखकर दीपा ने परेशानी का कारण पूछा तो अरूण ने रात्रि स्वप्न के बारे में दीपा को बताया कि मैं स्वप्न में माँ लक्ष्मी की पूजा कर रहा था, तभी माँ लक्ष्मी ने साक्षात् मुझे दर्शन देकर कहा -- अरे अरूण! तू बड़ा मूर्ख है। मैं तो तेरी भाग्य लक्ष्मी बनकर, तेरा भाग्य बदलने आई थी पर तूने अपनी पत्नी का गर्भपात कराकर मुझे घर में आने से

(शेष पृष्ठ 199 पर)

Dr. Shubhi Mehta Dhaker

Understanding E-Contracts

The development of internet has opened up avenues and opportunities one could never have imagined. The use of such internet services is aided by electronic contracts. The need of Electronic contracts is borne out of the requirement for speed, suitability and efficiency in business transactions.Inspite of ever increasing use, a lot of uncertainty surrounds the issue of electronic contracts in the entrepreneurial world. This partly stems from our insecurity in transacting online and partly from the intricacies involved in entering into e-contracts.

Recent innovations in information technology and electronic communication has changed the way businesses operate and function. Information is sent and received at supersonic speed. And this is where the electronic commerce offers the flexibility to business environment in terms of place, time, space, distance and payment. E-commerce is related to buying and selling of goods and services online. You clicked an **"I Agree"** button, like we usually do and agreed to the terms of the software license without reading them. Even though you did not read the terms of the license, you entered into a contract by clicking the "I agree" button.With the rapid growth of e-commerce, there is a rapid advancement in the use of e-contracts. But the deployment of e-contracts, especially in country like India, where technology is still in its nascent stage, poses a lot of challenges at three levels, namely conceptual, logical and implementation.

The Indian Contract Act 1872

Section 10 : 'All agreements are contracts if they are made by the free consent of parties competent to contract, for a lawful consideration and with a lawful object, and are not expressly declared to be void.

Interpreting Section 10 of the Act, the positive aspects can been follows :

1. **Free and conscious consent of the parties to the contract :** There should not be any coercion, undue influence, fraud, misrepresentation or mistake which will not be considered as free consent and will be considered as void.
2. **Persons entering to the contract should be competent :** The persons who are minors by law, persons with unsound mind are not competent and such contract entered into will be not enforceable.
3. **Lawful Consideration :** Any contract which is violative of any other law or consideration which is not legal will not be valid and will be void.
4. **Lawful Object :** The purpose of any such contract has to be lawful in its object or else will be rendered as void.

Proper Law of Contract

The Indian Contract Act, **(section 1**) deals with the proper law of contract to create legally binding contract and such an agreement and the proper law takes its validity on the following:

a. The place of contracting
b. The place of performance
c. The place of residence
d. The subject matter of contract
e. All other facts

Section 2 of the Act enumerates (a)–When one person signifies to an other his willingness to do or abstain from doing anything, with a view to obtaining the assent of that other to such act or abstinence, he is said to be making a proposal.

Section 2(b) when the person to whom the proposal is made signifies his assent thereto, the proposal is said to be accepted. A proposal, when accepted, becomes a promise.

Section 2(I) An agreement that are enforceable by law at the option of one or more of the parties thereto, but not at the option of the other or others, is a voidable contract.

Communication and Acceptance in Contract

Section 4 of the Act pertains to the communication in the contract and is as follows:

The communication of a proposal is complete when it comes to the knowledge of the person to whom it is made.

The Communication of an acceptance is complete-

As against the proposer, when it is put in a course of transmission to him so as to be out of the power of the acceptor, as against the acceptor,

when it comes to the knowledge of the proposer.

Section 5 Revocation of Proposals and Acceptance:

A proposal may be revoked at any time before the communication of its acceptance is complete as against the proposer, but not afterwards.

An acceptance may be revoked at any time before the communication of the acceptance is complete as against the acceptor, but not afterwards."

The essence of the above sections is that of the binding force of the contract. It denotes the effect of the binding nature of the contract on acceptance in the mode prescribed by the offer and is deemed as accepted only on receipt whereas it complete as for as the acceptance is done through post or telegram.

Contingent Contract

Section 31-36-speak about the type of contracts entered which has to be performed or not to be performed based on the eventuality of an event to happen or not to happen and is enforceable accordingly.

Breach of Contract

Section 73 speak about the breach of contract and appropriate remedies. This section enforces the binding nature of the contract and its legal validity. This section enumerates the loss or damage occurred to the party by the breach of contract of the other party, which is due to such breach of contract or prior knowledge of such consequence when the contract was entered to be compensated by the party who has breached it.

Electronic Contracts

Whether we accept it or not, Electronic contracts have become an integral part of our lives. From creating an e-mail account to ordering products and services online, electronic contracts are deeply embedded in the growing e-business sector. It is similar to a traditional business model wherein goods and services are exchanged for a particular quantity of consideration. The additional element in an E-Contract is the fact that the contract here takes place through a digital mode of communication like the internet. The traditional definition of contract cannot be applied to 'e-contracts' as the realm of e-contract is much bigger than the realm of a traditional mode of contract. In essence, e-contract is an agreement which is entered on internet by competent parties, with lawful consideration, free consent, without malafide intentions and to create legal relationship. It can be formed at any time by the interaction of two

or more individuals using electronic means, such as e-mail, the interaction of an individual with an electronic agent, such as a computer program, or the interaction of at least two electronic agents that are programmed to recognize the existence of a contract.

As per Section 4 of the Information Technology Act, 2000, legal recognition of electronic records, where any Information is in writing, typewritten or printed form is made available to a user in the electronic form for subsequent reference shall be deemed to have satisfied the requirement of law. Several Laws in unification are trying to regulate the business transactions of E-Contract. They are as follows:

- Indian Contract Act,1872
- Consumer Protection Act,1986
- Information Technology Act,2000
- Indian Copyright Act,1957

An e-contracting process essentially includes two stages: contract establishment (formation) and contract enactment (contract fulfilment or performance). The stage of contract establishment include activities such as identifying, checking and validation of contractual parties, negotiation and validation contract. Contract enactment is further divided into two phases: performance and post-contractual activities. Monitoring of contract performance and compensation activities belongs to the contract performance phase while contract enforcement forms part of both contract performance and post-contractual activities.Moreover, Section 1(4) of the IT Act, 2000 also lists down the instruments to which the IT Act, does not apply, which are as follows:

- Negotiable Instruments
- Power of Attorney
- A trust deed
- A will
- Contracts for sale or transfer of Immovable Property

Mode of Entering into E-Contracts

1. **Over-Mail contracts :** Sometimes, the contractual understanding is not consolidated in a single document, but can be in the form of a series of E-mails. One thing need to be ensured that there should be a clear offer (Section 2(a) of the Indian Contract Act, 1872) and acceptance (Section 2(b) of the Indian Contract Act, 1872).
2. **Counterparts Signed Contracts :** When it is impossible and not permissible for the parties to a contract to meet physically because of living in different locations, then in such cases, the agreed version of the contract can be signed and be sent to the other party in the

form of scanned copy for reference. In such cases, there can be multiple physical copies of the contract each signed by a party are called as counterparts.

3. **Click-Wrap Contracts :** Almost every software that we download from the Internet typically contains an End User License Agreement to which a user agrees by clicking on the "I Agree" button. It can be further classified into two:
   - **Type and Click :** Where the user types "I agree" and then clicks on the submit button. This was usually practised earlier.
   - **Icon clicking :** Where the user must click on "okay" or "I agree" button in order to accept the proposal or click on "cancel" to reject the proposal.
4. **Browse-wrap Contracts :** The agreements which are in the form of a "terms of use" or "terms of service" which usually exist in the corner of a website in the form of a link. Usually, these types of contracts are not considered to be legally binding in most of the countries.

Types of E-Contracts

E-Contracts can be categorized into two types i.e. web-wrap agreements and shrink-wrap agreements. A person witnesses these e-contracts everyday but is unaware of the legal intricacies connected to it. Web-wrap agreements are basically web based agreements which requires assent of the party by way of clicking the "I agree" or "I accept" button e.g. E-bay user agreement, Citibank terms and conditions, etc. Whereas Shrink-wrap agreements are those which are accepted by a user when a software is installed from a CD-ROM e.g. Nokia pc-suite software

Since Electronic Contracts also are regulated by the provisions of the Indian Contract Act, 1872, so it need to comply with the same to make it legally binding which are as follows:

1. As per the Section 2(a), which defines offer, legal rules applicable to it says that offer must be communicated to the offeree. Similarly, in user agreements, the terms of service must be specifically communicated and visible to the user. Just a link to the terms of the website would not suffice to qualify as intimation to the user.
   This case law can be referred on the above clause: Lalman Shukla v. Gauri Datt (1913) All LJ 489
2. The terms of the contract should not be changed after taking the approval and acceptance of the user. Because the user assented to those particular terms only, then it will "voidable" as defined in the Section 2 (i) of the Indian Contract Act, 1872.

3. Any changes if made should specifically and exclusively be communicated to the user.

Recognition of E-contracts

Offer : The law already recognizes contracts formed using facsimile, telex and other similar technology. An agreement between parties is legally valid if it satisfies the requirements of the law regarding its formation, i.e. that the parties intended to create a contract primarily. This intention is evidenced by their compliance with 3 classical cornerstones i.e. offer, acceptance and consideration. One of the early steps in the formation of a contract lies in arriving at an agreement between the contracting parties by means of an offer and acceptance. Advertisement on website may or may not constitute an offer as offer and invitation to treat are two distinct concepts. Being an offer to unspecified person, it is probably an invitation to treat, unless a contrary intention is clearly expressed. The test is of intention whether by supplying the information, the person intends to be legally bound or not. When consumers respond through an e-mail or by filling in an online form, built into the web page, they make an Offer. The seller can accept this offer either by express confirmation or by conduct.

Acceptance : Unequivocal unconditional communication of acceptance is required to be made in terms of the offer, to create a valid e-contract. The critical issue is when acceptance takes effect, to determine where and when the contract comes into existence. The general receipt rule is that acceptance is effective when received. For contracting no conclusive rule is settled. The applicable rule of communication depends upon reasonable certainty of the message being received. When parties connect directly, without a server, they will be aware of failure or partial receipt of a message. Such party realizing the fault must request re-transmission, as acceptance is only effective when received. When there is a common server, the actual point of receipt of the acceptance is crucial in deciding the jurisdiction in which the e-contract is concluded. If the server is trusted, the postal rule may apply, if however, the server is not trusted or there is uncertainty concerning the e-mail's route, it is best not to apply the postal rule.

Consideration and Performance : Contracts result only when one promise is made in exchange for something in return. This something in return is called 'consideration'. The present rules of consideration apply to e-contracts. There is concern among consumers regarding Transitional Security over the Internet. The e-directive on Distance Selling tries to generate confidence by minimizing abuse by purchasers and suppliers. It specifies–

- A list of key points, must be supplied to the consumer in 'a clear and comprehensible manner.'

- Written confirmation, or confirmation in another durable medium available and accessible to the consumer, of the principle points.
- The right of withdrawal enabling consumers to avoid deals entered into inadvertently or without sufficient knowledge, providing for seven-day cooling-off period free from penalty or reason to return the goods or reimburse the cost of services.
- Performance should be delivered within thirty days of order unless otherwise expressly agreed.
- Reimbursement of sums lost to fraudulent use of credit cards. It places the risk of fraud on the credit card Company, requiring them to take steps to protect their position.
- On the other hand, there is also need to protect sellers from rogue purchasers. For this, the provision of 'charge-back clauses' and encouragement of pre-payment by buyers is recommended.

Liability And Damages : A party that commits breach of an agreement may face various types of liability under contract law. Due to the nature of the systems and the networks that business employ to conduct e-commerce, parties may find themselves liable for contracts which technically originated with them but, due to programming error, employee mistake or deliberate misconduct were executed, released without the actual intent or authority of the party. Sound policies dictate that parties receiving messages be able to rely on the legal expressions of the authority from the sender's computer and this legally be able to attribute these messages to the sender. Techniques for limiting exposure to liability include:

1. Trading partner and legal technical arguments
2. Compliance with recognized procedures, guidelines and practices
3. Audit and control programmers and reviews
4. Technical competence and accreditation
5. Proper human resource management
6. Insurance
7. Legislation and regulation addressing relevant secure electronic commerce issuing.

Digital Signatures: Section 2(p) of The Information Technology Act, 2000 defines digital signatures as authentication of any electronic record by a subscriber by means of an electronic method or procedure. A digital signature functions for electronic documents like a handwritten signature does for printed documents. The signature is an unforgeable piece of data that asserts that a named person wrote or otherwise agreed to the document to which the signature is attached. A digital signature actually provides a greater degree of security than a handwritten signature. The recipient of a digitally signed message can verify both that the message originated from the person whose signature is attached and that the message has not been

altered either intentionally or accidentally since it was signed. Furthermore, secure digital signatures cannot be repudiated; the signer of a document cannot later disown it by claiming the signature was forged.

Section 5 of the IT Act established the legal validity of digital signature. Chapter IV of the Information Technology Act, 2000 also provides for use of an asymmetric crypto system and hash function and also recommends relevant standards.

Conclusion : E-contracts are well suited to facilitate the re-engineering of business processes occurring at many firms involving a composite of technologies, processes, and business strategies that aids the instant exchange of information. The e-contracts have their own merits and demerits. On the one hand, they reduce costs, saves time, fasten customer response and improve service quality by reducing paper work, thus increasing automation. And on the other hand, the law governing e-contract lacks certain provisions like – There is nothing to determine the intention of the parties to enter into a legally enforceable contract.The absence of confluence of stamping laws and the Act, has resulted in lack of legal infrastructure to facilitate "paperless stamping" of electronic documents. The extent of evidentiary value conferred to an electronically executed contract attested by other forms of signature, is also ambiguous. All of these factors hinder Indian businesses from moving towards a "paperless" world and renders most e-business initiatives largely futile. Considering that India has a huge business potential in the coming years, initiatives towards bettering the technological infrastructure and the legal framework regulating the same would be highly beneficial. This would also attract more cross-border transactions, further benefiting the economy of the country. With this, E-commerce is expected to improve the productivity and competitiveness of participating businesses by providing unprecedented access to an on-line global market place with millions of customers and thousands of products and services.

❑

References:

1. Bakshi P.M & Suri R.K., Cyber and E-commerce Laws, Bharat Publishing House, edn. 1, 2002.
2. Ryder D. Rodney, Guide to Cyber Laws, Wadhwa & Co. Publishers, edn. 1, 2001.
3. http://www.legalservicesindia.com/article/article/software-licensing-agreement-276-1.html
4. https://dict.mizoram.gov.in/uploads/attachments/cyber crime/electronic-contracts.pdf

रंजना सुराणा

महिला सुरक्षा और भारतीय कानूनों की प्रासंगिकता

देश की महिलाएँ दिनोंदिन जुल्मों का शिकार हो रही है। भारत सरकार एवं राज्य सरकारें महिलाओं को सुरक्षा देने में विफल रही है। अब हालात ऐसे हो गए हैं कि महिलाओं को सरेआम बेइज्जत किया जा रहा है। दहेज के कारण हज़ारों महिलाएँ मौत के मुँह में समा रही है। मासूम बच्चियों के साथ बलात्कार, छेड़छाड़ एवं जलाने जैसी घटनाएँ चरम सीमा तक पहुँच गई है।

महिलाओं के प्रति किए जाने वाले अपराधों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है --

- प्रथम श्रेणी में महिलाओं के प्रति हिंसात्मक अपराधों को रखा जा सकता है जिसके अंतर्गत बलात्कार, व्यपहरण और अपहरण, हत्या तथा अन्य महत्त्वपूर्ण अपराध सम्मिलित हैं।
- दूसरी श्रेणी में घरेलू अपराधों को रखा जा सकता है जो महिलाओं के विरुद्ध किए जाते हैं जैसे -- दहेज संबंधी हत्याएँ, पतियों द्वारा पत्नियों को पीटना और विधवाओं के साथ परिवारजनों द्वारा धोखाधड़ी आदि।
- तृतीय श्रेणी में सामाजिक अपराधों को रखा जा सकता है जो महिलाओं के विरुद्ध किए जाते हैं, यह अधिक चिंता के विषय है। मादा भ्रूण हत्या लंबे समय से चली आ रही बुराई है, लड़कियों से छेड़छाड़, अशिष्ट चित्रारूपण, महिलाओं का अनैतिक व्यापार आदि अपराध है।

मानव अधिकार और महिलाएँ

अतीत से ही नारी का समाज में सर्वोपरि स्थान रहा है। उसे सुख और समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता' हमारा आदर्श रहा है। यह स्थिति वर्षों तक चलती रही। लेकिन बीच में कुछ ऐसा समय आया जब मनुष्य ने स्वार्थवश नारी को मात्र भोग-विलास की वस्तु मान लिया। नारी पर नाना प्रकार के

अत्याचार किए जाने लगे। वह शोषण और यातना की शिकार होने लगी।

मानव अधिकार के अंतर्गत महिलाओं के संरक्षण को लेकर राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निम्नलिखित प्रयास किए गए हैं :--

स्त्री तथा विवाह संबंधित अंतर्राष्ट्रीय लिखित प्रपत्र :--

- महिलाओं के राजनैतिक अधिकारों के लिए सम्मेलन, 1952[1]
- विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीयता के लिए सम्मेलन, 1958[2]
- स्त्री के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति घोषणा, 1967
- स्त्री के सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति का अभिसमय, 1979 -- संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1979 में समाज के भीतर महिलाओं के खिलाफ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव से मुक्ति दिलाने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा को स्वीकार किया गया। इस अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा के 30 अनुच्छेदों के माध्यम से महिलाओं के खिलाफ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव को खत्म करने के लिए व्यवस्था की गई।
- स्त्री के खिलाफ हिंसा की समाप्ति की घोषणा, 1993
- विवाह के लिए सहमति, विवाह के लिए न्यूनतम आयु एवं विवाहों के पंजीकरण से संबंधित अभिसमय, 1962

भारतीय संविधान और महिलाएँ

हमारे संविधान का मुख्य उद्देश्य अज्ञानता, रोग एवं असमानता का निवारण करना है। इसके लिए भारतीय संविधान में विशेष प्रावधान किए गए हैं जो निम्नलिखित हैं :

- अनुच्छेद-14 -- विधि के समक्ष समता तथा विधि का समान संरक्षण का अधिकार।
- अनुच्छेद-15 -- धर्म, मूलवंश, जाति लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद वर्जित।
- अनुच्छेद-15 (3) -- स्त्रियों व बालकों के लिए विशेष उपबंध।
- अनुच्छेद-16 -- लोक नियोजन में अवसर की समानता।
- अनुच्छेद-19 -- स्वतंत्रता का अधिकार।
- अनुच्छेद-19 -- पुरुष और स्त्री को जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार।
- अनुच्छेद-39 (क) -- पुरुषों और स्त्रियों को समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार।
- अनुच्छेद-39 (छ) -- पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरूपयोग न हो।
- अनुच्छेद-42 -- काम की न्यायसंगत एवं मानवोचित दशाओं तथा प्रसूति सहायता का उपबंध।

- अनुच्छेद 51 -- भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हो।
- अनुच्छेद 326 -- लोक सभा और प्रत्येक राज्य की विधान सभा के लिए चुनाव मताधिकार के आधार पर होंगे। इस निर्वाचन में 18 वर्ष की आयु की महिला और पुरुष को भाग लेने का समान अधिकार है।
- इसके साथ ही संविधान के अनु. 32, 132, 133, 136 व 226 के अंतर्गत मूल अधिकार व अन्य अधिकारों के उल्लंघन की स्थिति में महिला व पुरुष को समान रूप से उच्च न्यायालय व उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर करने का समान अधिकार है।

इन संवैधानिक उपबंधों से यह स्पष्ट है कि हमारा संविधान महिलाओं की स्थिति को सुधारने एवं उन्हें सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दृष्टि से बराबरी का दर्जा प्रदान करने एवं उनकी श्रेष्ठतर प्रस्थिति प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

भारतीय कानून और महिलाएँ

भारतीय संविधान के अलावा कई कानूनों में भी महिलाओं की सुरक्षा व समानता के लिए महत्त्वपूर्ण प्रावधान सम्मिलित किए गए हैं जिनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण अधिनियमों एवं उनके प्रावधानों का संक्षेप में नीचे उल्लेख किया गया है।

- **भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872**
- धारा 112 के अंतर्गत विवाहित स्थिति के दौरान बच्चे का जन्म होना धर्मजत्व का निश्चात्मक सबूत है।
- धारा 133 (क) के अंतर्गत किसी विवाहित स्त्री के द्वारा आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरक के बारे में उपधारणा की व्यवस्था।
- धारा 113 (ख) में दहेज मृत्यु के बारे में उपधारणा।
- धारा 114 (क) के अंतर्गत बलात्संग के लिए कुछ अभियोजनों में सहमति न होने की अवधारणा।
- धारा 122 में विवाहित स्थिति के दौरान दी गई संसूचना को प्रकट करने के लिए विवश नहीं किया जा सकेगा।
- **सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 :**
- धारा 56 के अंतर्गत धन की डिक्री के निष्पादन में स्त्रियों को गिरफ्तार करने तथा सिविल कारगार में निरुद्ध करने के लिए आदेश प्रसारित नहीं कर सकते।
- धारा 60 के अनुसार भरण-पोषण की डिक्री के निष्पादन में वेतन का 2/3 भाग की कुर्की की जा सकती है।
- सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम व 33 के अनुसार दांपत्य अधिकारों

के प्रत्यास्थापना की डिक्री की पालना यदि पति द्वारा न की गई तो सिविल कारागृह में निरोध किया जा सकता है परंतु पत्नी को निरोध नहीं किया जा सकता है।

भारतीय दंड संहिता, 1860 में महिलाओं के विरुद्ध अपराधों की रोकथाम :--

- धारा 304 (ख) -- दहेज हत्या
- धारा 354 लज्जा भंग।
- धारा 366 स्त्री की इच्छा के विरुद्ध विवाह आदि करने के लिए व्यपहृत या अपहृत करना।
- धारा 366 (क) अप्राप्तवय लड़की का उपापन।
- धारा 372 के अंतर्गत 18 वर्ष से कम आयु की लड़की को वैश्यावृत्ति के लिए खरीदना और बेचना अपराध है।
- धारा 376 बलात्कार के लिए दंड का प्रावधान।
- धारा 495 में वैवाहिक धोखाधड़ी।
- धारा 496 जान-बूझकर ग़ैर-कानूनी विवाह।
- धारा 497 में पत्नी की जानकारी होने के बाद भी संबंध स्थापित करना।
- धारा 498 में बहला-फुसला कर छिपाना और सम्भोग करना।
- धारा 498 (क) दहेज क्रूरता।

दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 125 में सभी धर्म की विवाहित महिलाओं एवं वृद्ध माता-पिता को भरण पोषण प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

- **महिलाओं के लिए सामाजिक विधायन :--**
- बाल विवाह निरोधक अधिनियम, 2006
- हिंदू विवाह अधिनियम, 1955
- हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956
- गर्भ का चिकित्सीय समाप्त अधिनियम, 1971
- दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961
- मुस्लिम विवाह तलाक के अधिकारों का संरक्षण अधिनियम, 1986
- महिलाओं तथा लड़कियों का अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम, 1956
- घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005
- मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961
- समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976

महिला उत्पीड़न के रोकथाम के लिए न्यायपालिका की भूमिका बहुत सराहनीय रही है। हमारी न्यायपालिका ने महिला उत्पीड़न के रोकथाम के लिए बहुत सार्थक प्रयास किए है जिन्हें हम निम्नलिखित वादों की सहायता से समझ सकते हैं।

विशाखा बनाम स्टेट ऑफ राजस्थान एक महत्त्वपूर्ण मामला है। इसमें उच्चतम न्यायालय द्वारा कामकाजी महिलाओं के यौन उत्पीड़न को रोकने हेतु दिशा-निर्देश जारी किए हैं। यौन उत्पीड़न को परिभाषित भी किया गया है। किसी कामकाजी महिला से शारीरिक संबंध स्थापित करने का प्रस्ताव रखना, यौन संबंध के लिए याचना करना, यौन संबंधी क्रियाकलाप करना, अश्लील साहित्य दिखाना आदि यौन उत्पीड़न में सम्मिलित माना गया है।

शाहबानो के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा इस तथ्य की पुष्टि भी कर दी गयी थी कि 1986 से पूर्व हिंदू एवं मुस्लिम महिलाओं के लिए चाहे वे तलाकशुदा हो या न हो, भरण-पोषण की एक-सी विधि होगी। लेकिन इस मामले में कट्टरपंथियों में हलचल मच गई इसलिए इस अधिनियम द्वारा तलाकशुदा महिलाओं का भरण-पोषण का अधिकार परिसीमित हो गया।

दामिनी रेप केस -- यह एक महत्त्वपूर्ण मामला था इसमें 16 दिसंबर 2012 को एक निजी बस में 23 वर्ष की छात्रा के साथ सामूहिक बलात्कार हुआ था। इस केस को लेकर आपराधिक विधि में कई प्रकार के संशोधन किए गए। आपराधिक कानून अध्यादेश 2013 पारित किया गया जिसमें 90 प्रतिशत वर्मा समिति की रिपोर्ट द्वारा दिए गए सुझावों को शामिल किया गया है।

बी. शाह बनाम लेबर कोर्ट कोयंबटूर के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम, 1961 महिला कर्मकारों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया है। अतः इस अधिनियम के उपबंधों का निर्वचन करने में न्यायालय को उदारवादी नियम का पालन करना चाहिये जिससे कि न केवल महिला कर्मकारों का भरण-पोषण हो सके वरन् वे अपनी क्षीण शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकें, शिशुओं का पालन-पोषण हो सके तथा अपनी पूर्ण कार्य-क्षमता को बनाए भी रख सकें।

एयर इंडिया बनाम नरगिस मिर्जा के मामले में भारतीय विमान सेवा परिचारिकाओं ने एयर इंडिया द्वारा बनाए गए नियम की वैधता को चुनौती दी गई थी जिसके अधीन परिचारिकाओं को 35 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर अथवा वे प्रथम बार गर्भवती हो जाए तो उन्हें सेवानिवृत्त करने का उपबंध था।

निष्कर्ष के रूप में यह कहना उचित होगा की जब से मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 लागू हुआ है और राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन हुआ है तब से ज़रूर महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार हुआ है लेकिन ये सुधार भी नाकाफी है। हमारे देश में महिलाओं को लेकर कई अधिनियम बनाए गए हैं उससे नारी की स्थिति समाज में ओर अधिक सुदृढ़ होनी चाहिए किंतु अफसोस की बात यह है कि नारी

आज भी सुरक्षित नहीं है। महिलाओं पर बढ़ रहे अत्याचार का कारण नैतिक मूल्यों का पतन है। आज परिवार का विघटन हो रहा है। इसका प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर सबसे ज्यादा पड़ा है। परिवार में ही महिलाओं और बच्चों के प्रति अपराध की घटनाएँ बढ़ी है। इसके लिए परिवार कहाँ तक ज़िम्मेदार है यह सोचने की ज़रूरत है क्योंकि ये ही बच्चे बड़े होकर अपराधी बनते हैं। यहाँ यह आवश्यक है कि महिलाएँ अपनी शक्ति को पहचाने और बच्चों में सुभाषचंद्र बोस जैसे राष्ट्रभक्तों के संस्कार पैदा करें। बच्चों को महिलाओं और बड़ों का सम्मान करना सिखाए।

❑

संदर्भ

1. मानव अधिकार संरक्षण, डॉ. लालाराम जाट।
2. मानव अधिकार, दिलीप जाखड़।
3. मानव एवं बाल कानून, डॉ. बसंती लाल बाबेल।
4. महिलाओं के प्रति अपराध, श्रीमती सुधारानी श्रीवास्तव।
5. घरेलू हिंसा से संरक्षण विधि, आर.पी. कटारिया।
6. भारत का संविधान, डॉ. जय नारायण पांडेय।
7. भारत का संविधान, डॉ. बृज किशोर शर्मा।

(पृष्ठ 185 का शेष)

पहले ही रोक दिया। मैंने तो सोचा था, तेरे भाग्य को चमका दूँगी और निःसंदेह तेरे घर में निवास करूँगी, तेरा कल्याण करूँगी। मैं स्वप्न में ही लक्ष्मी जी के चरणों में लिपट गया और भ्रूण हत्या के लिए माफी माँगने लगा। परंतु देखते-ही-देखते स्वप्न में लक्ष्मी जी गायब हो गई।

यह सब सुनकर दीपा भी अब विचलित हो उठी थी और दोनों अपने कुकृत्य पर पश्चाताप करने लगे। पास ही अपने घर में गणेश, लक्ष्मी पूजन वाले स्थान की ओर देखकर सिर झुकाए अपराधी भाव से ग्रस्त हुए खड़े थे। वे दोनों आज पश्चाताप की उस अग्नि में झुलस रहे थे, जिसका आज कोई समाधान नहीं था।

❑

डॉ. श्रीमती राजेश जैन

लोक साहित्य और भारतीय स्वतत्रंता संग्राम

लोक साहित्य में स्वाधीनता की अनुगूँज विशेष महत्त्व रखती है। 16वीं शताब्दी में 'सोने की चिड़िया' कहा जाने वाला भारत कब पराधीन हो गया इसका आभास अंग्रेजों की शोषण पूर्ण नीति से ज्ञात हुआ, परंतु पराधीनता का यह जाल लंबे समय तक भारतवासियों को बाँध कर नहीं रख सका। देश भक्तों के बलिदान और उनके अथक परिश्रम से भारत वासी स्वतंत्र हो गए। लेकिन स्वतत्रंता रूपी यह क्रांति करवटें लेती हुई लोक चेतना की उत्ताल तरंगों से आप्लावित रही है। यह स्वाधीनता हमें आसानी से प्राप्त नहीं हुई बल्कि इसके पीछे शहादत का इतिहास है। 'स्वतत्रंता व्यक्ति का जन्म सिद्ध अधिकार' का नारा देने वाले बाल गंगाधर तिलक के अतिरिक्त लाला लाजपत राय एवं विपिनचंद्र पाल ने इस स्वाधीनता संग्राम को एक पहचान दी, तो महात्मा गाँधी जी ने इसे जन-जन तक पहुँचा कर उसे जन आंदोलन बनाया। अंततः 15 अगस्त 1947 के सूर्योदय ने अपनी कोमल रश्मियों से एक नए स्वतंत्र भारत का स्वागत किया।[1]

इतिहास अपनी गाथा खुद कहता है, सिर्फ पन्नों पर नहीं बल्कि लोक साहित्य के माध्यम से, लोक मानस के कंठ में और गीतों आदि के माध्यम से यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होता रहता है। वैसे भी इतिहास की वही लिपिबद्धता सार्थक और शाश्वत होती है जो बीते हुए कल को उपलब्ध साक्ष्यों और प्रमाणों के आधार पर यथावत प्रस्तुत करती है जरूरत है कि इतिहास की उन गाथाओं को भी समेटा जाए जो मौखिक रूप से जन-जीवन में विद्यमान है, तभी ऐतिहासिक घटनाओं का सार्थक विश्लेषण हो सकेगा। लोकलय की आत्मा में एक ओर मस्ती और उत्साह की सुगंध है तो दूसरी ओर पीड़ा का स्वाभाविक शब्द स्वर भी है क्योंकि लोक-संस्कृति वह है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती थी जिसका स्त्रोत जनता थी। लोक-संस्कृति तो हमारी जीवन शक्ति होती है।[2]

लोक-साहित्य, लोक-संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। यदि लोक-संस्कृति एक

विशाल वट वृक्ष है तो लोक साहित्य उसकी एक शाखा है, यदि लोक संस्कृति शरीर है तो लोक साहित्य उसका एक अवयव है। अतः दूसरे शब्दों में साधारण जनता से संबंधित साहित्य को लोक साहित्य कहते हैं जिसका स्वाधीनता के दौरान अत्यधिक प्रयोग किया गया। कहा जाता है कि पूरे देश में एक ही दिन 31 मई, 1857 को क्रांति आरंभ करने का निश्चय किया गया था, परंतु 29 मार्च, 1857 को बैरकपुर छावनी के सिपाही मंगल पांडे की शहादत से उठी ज्वाला, वक्त का इंतजार नहीं कर सकी और प्रथम स्वाधीनता संग्राम का आग़ाज़ हो गया। मंगल पांडे के बलिदान की दास्ताँ को लोक चेतना में व्यक्त किया गया है --

''जब सत्तावनि के रारि भइलि।
वीरन के वीर पुकार भइल।।
वलिया का मंगल पांडे के।
वलिदेवी से ललकार भइक।।
मंगल मस्ती में चूर चलल पहिला बागी मशहूर चलल।
गोरिन का पलटनि का आगे।
बालियाँ के बाँका सूर सलल।।''[3]

सन् 1857 की क्रांति वास्तव में जनमानस की क्रांति थी तभी तो इसकी अनुगूँज लोक-साहित्य में सुनाई पड़ती है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम सिर्फ व्यक्तियों द्वारा नहीं लड़ा गया बल्कि कवियों और लोक गायकों ने भी भारतीयों की प्रेरित करने में प्रमुख भूमिका निभाई जिसे लोक गीतों में इस प्रकार व्यक्त किया गया है --

''गाँव-गाँव में डुग्गी वाजल, बाबू के फिरल दुहाई।
लोहा चबवाई के नेवता वा, सव जन आपन दल बदल।
वाजन गंवकई के नेतवा, चूड़ी फोरवाई नेवता.....

इस प्रकार स्पष्ट है कि सन् 1857 की लड़ाई एक आर-पार की लड़ाई थी, हर कोई चाहता था कि इस संग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध जमकर लड़े। यहाँ तक कि ऐसे नौजवानों को जो घर में बैठे थे महिलाओं ने लोकगीत के माध्यम से अनेक व्यंग्य कसते हुए उन्हें प्रेरित किया --

''लागे शरम लाज, घर में बैठ जाहू।
मरद से बनि के, लुगइया आए हरि।
पहिरि के साड़ी चूड़ी, मुहवा छिपाई लेहु।
राखि लेई तोहरी, पगरइया आए हरि।''[4]

अतः 1857 की क्रांति की गूँज दिल्ली से सुदूर पूर्वी उत्तर प्रदेश के इलाकों में

भी सुनाई दी थी वैसे भी उस समय तक अंग्रेजी फौज में ज्यादातर सैनिक इन्हीं क्षेत्रों के थे। इसके अतिरिक्त गुरिल्ला शैली के कारण फिरगिंयों में दहशत और आतंक का पर्याय वन क्रांति की ज्वाला भड़काने वाले तात्या टोपे से अंग्रेजी रूह भी काँपती थी। राजस्थानी कवि शंकरदान सामौर ने तात्या टोपे के संबंध में लिखा है --

जढै गयो जंग जीतियों, खटकै विण रण खेत।
लकडौ लड़ियाँ तांतियों, हिंद थान रै हेत।।

स्वाधीनता संग्राम में जिस मनोयोग से पुरुष नायकों ने भाग लिया, महिलाएँ भी उनसे पीछे नहीं रही। लखनऊ में बेगम हजरत महल और झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई ने इस क्रांति की अगुवाई की थी। रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी वीरता से अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिए। उनकी मौत पर जनरल हयूगरोज ने कहा था कि यहाँ वह औरत सोई हुई है जो विद्रोही में एक मात्रा मर्द थी। झाँसी की रानी नामक कविता में सुभद्रा कुमारी चौहान 1857 की क्रांति में उनकी वीरता का बखान करती है, परंतु उनसे पहले ही बुदेलखंड की वादियों में दूर-दूर तक लोकलय सुनाई देती है --

''खूब लड़ी मरदानी अरे झाँसी वाली रानी,
पुरजन-पुरजन तोपा लगा दई, गोला चलाए आसमानी,
अरे झाँसी वाली रानी, खूब लड़ी मरदानी,
सबरे सिपाइन को पैरा जलेवी, अपन चलाई गुरधानी,
दौड़ मोरचा जसकर को दौरी, ढूढ़े हूँ मिले नहीं पानी,
अरे झाँसी वाली रानी, खूब लड़ी मरदानी।

इस प्रकार 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम ने अंग्रेजी हुकूमत को हिला कर रख दिया। बौखला कर अंग्रेज हुकूमत ने भारतीय देश भक्तों को फाँसी दे दी और पेड़ों पर समूहों में लटका कर मृत्यु दंड दिया और तोपो से बाँध कर दागा गया जिस संबंध में लिखा है कि --

झूलि गइले अमिली के डरियाँ
वजरिया गोपी गंज कई रहलि...

इस तरह अंग्रेजों के अत्याचार बढ़ते जा रहे थे, वे प्रत्येक तरीके से भारतीयों का शोषण कर रहे थे। इसलिए 28 दिसंबर 1885 को भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना कर अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता आंदोलन प्रारंभ कर दिया लेकिन अंग्रेजों के द्वारा एक के बाद एक ऐसे नियम विरुद्ध कार्य किए जा रहे थे जिसमें बंगाल विभाजन, जलियाँवाला बाग हत्याकांड जो अंग्रेजी शासन की बर्बरता और नृशंसता का नमूना था। इस हत्याकांड ने भारतीयों विशेषकर नौजवानों की आत्मा को हिला कर रख दिया था। जलियाँवाला बाग

के संबंध में सुभद्रा कुमारी चौहान ने बसंत नामक कविता के माध्यम से श्रद्धांजलि अर्पित की है --

कोमल बालक मरे यहाँ, गोली खा-खा कर।
कलियाँ उनके लिए, गिराना थोड़ी ला कर।।
आशाओं में भरे हृदय भी छिन्न हुए है।
अपने प्रिय परिवार देश से भिन्न हुए है।।[4]

अतः स्पष्ट है कि स्वाधीनता संग्राम में अनेक नेताओं जिनमें खुदीराम बोस, सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुभाष चंद्र बोस जैसे महान क्रांतिकारी नेताओं ने अभूतपूर्व योगदान दिया था और हँसते-हँसते फाँसी के फंदों को गले से लगा लिया था। महात्मा गाँधी जी आजादी के दौर के सबसे बड़े नेता थे, जिन्होंने सत्याग्रह और अंहिसा का मार्ग अपना कर भारत को आजाद करने में महत्त्वपूर्ण निभाई। भारत माता की गुलामी की बेड़ियाँ काटने में असंख्य लोग शहीद हो गए। लोक-गीत एवं लोक-साहित्य ने नौजवानों में देश भक्ति की भावना जाग्रत की, तब 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ था। सूर्योदय की बेला में विजय का आभास हो रहा था। कविवर जगदंबा प्रसाद मिश्र शहीदों की इन कुर्बानियों को व्यर्थ नहीं जाने देते इसलिए उन्होंने लिखा है कि --

''शहीदों की चिताओं पर जुड़ेगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशाँ होगा।।
कभी वह दिन आएगा, जब अपना राज देखेंगे।
जब अपनी ही जमीं और अपना ही आसमाँ होगा।।''
जय हिंद-जय भारत!

❑

संदर्भ

1. अरोड़ा एम.डी., राजनीति विज्ञान, टाटा एम.सी. ग्रोहिल, नई दिल्ली, 2012, पृ. 13.1
2. यादव डॉ. आकाँक्षा, लोक साहित्य में स्वाधीनता की अनुगूँज, लेख इंटरनेट।
3. माथुर डॉ. एस.के., भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1993, पृ. 14
4. शर्मा डॉ. एम.एल., भारत का स्वतत्रंता संघर्ष, भावना प्रकाशन, दिल्ली, 1998, पृ. 59

रिपोर्ट

डॉ. आशु खन्ना

विधि भारती परिषद् का 'भारत में चुनाव : हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार' विषय पर सेमिनार

विधि भारती परिषद् समय-समय पर देश के समक्ष समकालीनता के परिप्रेक्ष्य में उभरने वाले मुद्दों पर आरंभ से ही सेमीनार और विचार संगोष्ठियों का आयोजन करती आ रही है। उसी शृंखला को आगे बढ़ाते हुए विधि भारती परिषद् ने केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग से इस वर्ष भी 29 मार्च, 2017 को एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विषय 'भारत में चुनाव : हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार' पर एक-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का सफल आयोजन किया। संगोष्ठी के लिए इस विषय के चयन का अपना एक सामयिक महत्त्व था। हमेशा की तरह 21वीं शती के दूसरे दशक में भी भारत में लोकतंत्र को पुख्ता बनाने के लिए कई राज्यों के साथ-साथ देश में आम चुनाव भी हुए। आम चुनावों में एक उल्लेखनीय उपलब्धि यह रही कि जनता ने निर्णायक बहुमत देकर अपनी राजनीतिक परिपक्व समझ का परिचय दिया जिससे केंद्र में एक मजबूत सरकार का निर्माण हुआ। चूँकि चुनावों में हर प्रत्याशी मतदाताओं से प्रायः हिंदी में ही संवाद स्थापित करता है अतः इस विषय के बारे में विधि भारती परिषद् की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना ने बताया कि ''इसलिए यह रोचक और महत्त्वपूर्ण माना गया कि क्यों न भारत में चुनावों में हिंदी की भूमिका का मूल्यांकन कर यह पता लगाया जाए कि चुनाव हिंदी की प्रगति में क्या भूमिका निभाते हैं और क्या हिंदी के विकास को एक मर्यादापूर्ण दिशा मिलती है और इस प्रकार हिंदी का अन्य क्षेत्रों में कितना स्वागत या विकास होता है।''

इसी विषय का दूसरा पक्ष था -- चुनाव सुधार। यद्यपि स्वतंत्रोत्तर भारत में समय-समय पर आयोजित होने वाले चुनावों से भारत के लोकतंत्र को हर बार एक नई दिशा मिली और यह भी सिद्ध हुआ कि सत्ता वस्तुतः देश की जनता के हाथों में निहित है, फिर

भी भारत जैसे विशद और बहुल जनसंख्या वाले देश में चुनाव सुधार की सर्वदा संभावना रहती है। समय-समय पर चुनाव सुधार होते भी रहे हैं और होते रहते हैं। परंतु चुनाव प्रक्रिया एक ऐसा लोकतांत्रिक साधन है जिसमें कुछ-न-कुछ कमियाँ रह जाती हैं। अतः चुनाव प्रक्रिया को और उत्कृष्ट आदर्श बनाने के लिए उसमें सुधार की हमेशा ही आवश्यकता रहती है।

इस संगोष्ठी का आयोजन मालवीय स्मृति भवन सभागार, 52-53, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002 में किया गया। इस संगोष्ठी का उद्घाटन किया भारत सरकार के (राज्य मंत्री स्वतंत्र प्रभार) संस्कृति, पर्यटन और नागरिक उड्डयन मंत्री माननीय डॉ. महेश शर्मा जी ने और इस उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता की दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश और राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग के पूर्व सदस्य न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर जी ने। इस सत्र की विशिष्ट अतिथि थी प्रो. (डॉ.) उषा टंडन, प्रोफेसर प्रभारी, विधि केंद्र-1, विधि संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, डॉ. रवि टेकचंदानी, निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार एवं राष्ट्रीय सिंधी भाषा विकास परिषद् और डॉ. राजीव कुमार शुक्ला, उप-महानिदेशक (कार्यक्रम) आकाशवाणी। माननीय मंचासीन अतिथियों का स्वागत भाषण किया लोक सभा के पूर्व महासचिव एवं भारत के संविधान विशेषज्ञ तथा विधि भारती परिषद् के अध्यक्ष पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप जी ने। उद्घाटन का सत्र संयोजन किया डॉ. के.एस. भाटी ने, जो इंडियन लॉ इंस्टीट्यूट में रजिस्ट्रार रह चुके हैं और अब उच्चतम न्यायालय के अधिवक्ता हैं। धन्यवाद ज्ञापन किया टेक महिंद्रा स्मार्ट अकादमी की डीन डॉ. आशु खन्ना ने।

मंत्री महोदय डॉ. महेश शर्मा तथा मंचासीन सभी अतिथियों द्वारा दीप प्रज्ज्वलन करने के पश्चात् पुस्तकों और पुष्पों से सभी का स्वागत किया गया। डॉ. सुभाष कश्यप का स्वागत किया डॉ. आशु खन्ना ने, न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर का स्वागत डॉ. शिखा कौशिक ने, और डॉ. राजीव कुमार शुक्ला का स्वागत किया भगत फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय, सोनीपत के प्रो. डॉ. प्रमोद मलिक ने। प्रसन्नता का विषय यह था कि इस संगोष्ठी में न्यायमूर्ति श्री एस.एन. कपूर की धर्मपत्नी श्रीमती कपूर भी पधारी थीं, उनका स्वागत किया श्रीमती सन्तोष खन्ना ने, उन्हें पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ दे कर।

महिला विधि भारती पत्रिका (अंक 90) का लोकार्पण

इस अवसर पर डॉ. महेश शर्मा तथा मंचासीन अतिथियों ने विधि भारती परिषद् की त्रैमासिक पत्रिका 'महिला विधि भारती' के जनवरी-मार्च, 2017 के अंक-90 का लोकार्पण किया। 90 अंक के प्रकाशन के साथ ही इस पत्रिका के प्रकाशन के 22

वर्ष पूरे हो चुके हैं और यह पत्रिका प्रकाशन के अपने 23वें वर्ष में चल रही है। डॉ. महेश शर्मा ने अपने उद्घाटन उद्बोधन में संगोष्ठी के विषय ‘हिंदी भाषा तथा चुनाव सुधारों पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि विधि भारती परिषद् साधुवाद की पात्र है कि उसने देश के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार मंथन का अवसर उपलब्ध किया। उन्होंने कहा कि हिंदी देश की राजभाषा, संपर्क भाषा और जनभाषा है और आरंभ से ही चुनावों के दौरान मतदाताओं के साथ हिंदी के माध्यम से ही संवाद साधा जाता रहा है। वर्ष 2014 इस बात का साक्षी है कि प्रधान मंत्री ने अपने चुनाव प्रचार के दौरान देश के अनेक भागों में आयोजित अपनी महारैलियों में देश के 120 करोड़ लोगों से हिंदी के माध्यम से अपनी बातें रखीं। यही नहीं, प्रधान मंत्री का पद संभालने के बाद उन्होंने अपनी विदेश यात्राओं के दौरान हिंदी को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया और संयुक्त राष्ट्र संघ सहित समूचे विश्व में हिंदी को गुँजायमान किया। वास्तव में भारत में हिंदी और भारतीय भाषाएँ ही जन-जन की वाणी है और उसकी पहचान है। जहाँ तक चुनावों का संबंध है भारत के लोकतंत्र की धुरी ही चुनाव हैं और पिछले लगभग 70 वर्षों में भारत में चुनाव ही वह आधार रहा जिसके बल पर लोकतंत्र टिका हुआ है। वर्ष 2014 के चुनावों में 85 करोड़ मतदाता थे और जिस तरह से सुनियोजित ढंग से यह चुनाव कराए गए, समूचे विश्व की आँखें भारत पर लगी हैं। भारत में इतने विशाल पैमाने पर चुनाव होते हैं कि कहीं-न-कहीं उसमें खामियाँ आ जाती है। अतः उन की तरफ ध्यान दे कर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए। आकाशवाणी के उप-महानिदेशक (कार्यक्रम) डॉ. राजीव शुक्ला ने कहा कि जहाँ तक चुनाव सुधारों का संबंध है, इसकी ओर ध्यान दिलाने में इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया की बहुत सक्रिय भूमिका रही है। चुनाव प्रक्रिया के दौरान मीडिया की पग-पग पर उस पर कड़ी नज़र रहती है और जहाँ कहीं भी आचार संहिता का उल्लंघन हो रहा है या किसी चुनावी कायदे कानून का उल्लंघन हो रहा है, उसकी ओर मीडिया बराबर इंगित करता चलता है। इसलिए चुनावों में मीडिया की हमेशा रचनात्मक भूमिका रहती है। इसीलिए मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में न्यायमूर्ति ए.के. कपूर ने चुनावी प्रक्रिया में न्यायपालिका की भूमिका को महत्त्वूपर्ण बताया। यद्यपि चुनावी प्रक्रिया के बारे में सरकार को ही पहल करनी होती है परंतु सरकार कई बार इस दिशा में उदासीन-सी प्रतीत होती है और चूँकि न्यायपालिका के समक्ष चुनाव सुधारों को ले कर कई प्रकार के मामले आते रहते हैं तो उसे हस्तक्षेप करना पड़ता है। यहाँ उच्चतम न्यायालय के कई ऐसे ऐतिहासिक निर्णयों का उल्लेख किया जा सकता है जो चुनाव सुधार की दिशा में मील का पत्थर साबित हुए हैं या

हो सकते हैं। पाँच राज्यों में होने वाले चुनावों से बिल्कुल पहले उच्चतम न्यायालय ने एक महत्त्वपूर्ण फैसले में कहा था कि चुनावों की प्रक्रिया के दौरान धर्म, जाति आदि का इस्तेमाल नहीं होना चाहिए। इस आधार पर चुनाव को अवैध ठहराया जा सकता है। इन पाँच राज्यों में चुनाव प्रचार के दौरान क्या उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय का उल्लंघन हुआ, इसके बारे में आप सब जानते हैं। कई बार कानून प्रावधान होते हुए भी उनका अनुपालन नहीं होता। मैं समझता हूँ कि चुनाव सुधार होने से देश भी सुधरेगा और देश का सही मायनों में विकास होगा।

राष्ट्र भारती सम्मान

विधि भारती परिषद् ने वर्ष 2008 में विधि भारती सम्मान की स्थापना की थी। यह सम्मान देश के उन विद्वान् साहित्यकार, कलाकार, समाजसेवी तथा अन्य ऐसे मनीषियों को प्रदान किया जाता है जिन्होंने अपनी सतत साधना और अटूट निष्ठा से देश और समाज को अपने प्रेरक अवदान की गंगा से आप्लावित किया हो। अभी तक राष्ट्र भारती सम्मान निम्नलिखित मनीषियों को प्रदान किया जा चुका है --

1. डॉ. श्रीमती राजेश जैन, मध्य प्रदेश
2. ले. कर्नल रतन जांगिड़, राजस्थान
3. डॉ. उषा देव, दिल्ली
4. बीरभद्र कार्कीढोली, सिक्किम
5. श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण, दिल्ली

श्री बीरभद्र कार्कीढोली (सिक्किम) को उनके नेपाली भाषा में कविता, कहानी तथा अन्य विधाओं में रचनाओं के लिए 2017 का राष्ट्र भारती सम्मान इस संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में प्रदान किया गया। उन्हें मंच मनीषियों ने विधि भारती परिषद् का एक प्रतीक चिह्न और प्रमाण-पत्र भेंट किया तथा साथ ही शॉल ओढ़ा कर तथा पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ प्रदान कर सम्मानित किया। श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण ने भी हिंदी साहित्य के प्रति अपना संपूर्ण जीवन समर्पित करते हुए कविता, कहानी, नाटक तथा अन्य विधाओं में लेखन कार्य किया है तथा उन्होंने 30 वर्ष पहले स्थापित परिचय साहित्य परिषद् के माध्यम से देश के अनेक रचनाकारों को मंच प्रदान कर उनकी लेखन प्रतिभा को बनाया और सँवारा है। उनकी साहित्य के प्रति इन अनन्य सेवाओं के लिए वर्ष 2017 का राष्ट्र भारती सम्मान इस संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में प्रदान किया गया। इसके लिए मंच मनीषियों ने उन्हें शॉल ओढ़ा कर तथा पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ भेंट कर राष्ट्र भारती सम्मान से सम्मानित करते हुए विधि भारती परिषद् का प्रतीक चिह्न और प्रमाण-पत्र भी प्रदान किया।

द्वितीय सत्र

संगोष्ठी के द्वितीय सत्र में भारत में चुनाव : हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार पर विचार-विमर्श किया गया और देश के कुछ राज्यों से आए तथा दिल्ली के कई प्रतिभागियों ने अपने शोध आलेख प्रस्तुत किए। इस सत्र के मुख्य अतिथि थे उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. जगदीश सी. बत्रा तथा विशिष्ट अतिथि थे दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. पूरनचंद टंडन और बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, सोनीपत के डॉ. प्रमोद मलिक। इस सत्र की अध्यक्षता मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय की पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं प्रतिष्ठित बाल साहित्यकार डॉ. शकुंतला कालरा ने की। इस सत्र का संयोजन किया श्यामा प्रसाद मुखर्जी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय की सहायक प्राचार्या डॉ. सपना ने और धन्यवाद किया विधि भारती परिषद् की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना ने। इस सत्र के अतिथियों का विधिवत् रूप से स्वागत किया गया। सर्वप्रथम, इस सत्र के मुख्य अतिथि श्री जगदीश सी. बत्रा का स्वागत किया सुश्री रेनू ने उन्हें पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ प्रदान कर। डॉ. शकुंतला कालरा का स्वागत किया डॉ. बबली वशिष्ठ ने, डॉ. प्रमोद मलिक का स्वागत डॉ. उर्मिल वत्स ने तथा सत्र संचालिका डॉ. सपना का स्वागत किया सिक्किम से पधारी श्रीमती चंद्रकला ने उन्हें पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ प्रदान कर।

तृतीय सत्र एवं पुस्तक लोकार्पण

संगोष्ठी के तृतीय एवं अंतिम सत्र के मुख्य अतिथि भारतीय निर्वाचन आयोग के मुख्य चुनाव आयुक्त डॉ. नसीम जैदी थे किंतु भारत से बाहर होने के कारण वह इस कार्यक्रम में नहीं आ सके। इस सत्र की अध्यक्षता की विधि केंद्र-2, विधि संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय की (प्रोफेसर प्रभारी) प्रो. (डॉ.) किरण गुप्ता ने और विशिष्ट अतिथि थे निर्वाचन आयोग के परामर्शी और विधि सलाहकार, श्री एस.के. मेहंदीरत्ता तथा केंद्रीय हिंदी निदेशालय के पूर्व उप-निदेशक डॉ. दिनेश दीक्षित। सत्र संयोजन किया आकाशवाणी के पूर्व उप-महानिदेशक श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने। सत्र के अतिथियों के स्वागत क्रम में डॉ. किरण गुप्ता का स्वागत डॉ. पूनम माटिया, श्री एस.के. मेहंदीरत्ता का स्वागत श्रीमती सरोज शर्मा ने और प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी का स्वागत किया प्रो. सुरेश सिंह ने पुस्तकें और पुष्प-गुच्छ प्रदान करके किया। इस सत्र में भी कुछ शोध आलेख पढ़े गए जिसमें एक शोध आलेख था निर्वाचन आयोग के हिंदी संभाग की उप-निदेशक डॉ. साधना गुप्ता का। उन्होंने निर्वाचन आयोग में हिंदी के प्रगामी प्रयोग पर अपना पर्चा पढ़ा। इसी सत्र के दौरान मंच मनीषियों द्वारा दो पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया। पुस्तकें थीं --

1. Birbhadra Karkidholi : The Flight of a Skylark, Edited by : Prof. Om Raz, Published by Vidhi Bharati Parishad.
2. 'यह तो मोहब्बत नहीं है', (काव्य-संग्रह), डॉ. शिखा कौशिक नूतन

भारत के निर्वाचन आयोग के विधि परामर्शी और सलाहकार श्री एस.के. मेहंदीरत्ता ने चुनाव नियमों और प्रक्रिया के संबंध में एक बृहद् ग्रंथ की रचना की है। निर्वाचन आयोग में अपने चार दशक से अधिक अनुभव के आधार पर उन्होंने कहा कि भारत के चुनाव आयोग का प्रमुख दायित्व है देश में लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए समय-समय पर स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराना। चुनाव आयोग ने इस प्रक्रिया को सुलभ बनाने के लिए मतदान के लिए ई.वी.एम. मशीनों का प्रयोग शुरू किया। जब से ऐसा हुआ है तब से बूथ कैंपरिंग और बैलेट द्वारा जबरदस्ती वोट डालना जैसे कदाचारों पर अंकुश लग गया है। यद्यपि कुछ राजनीतिक दल ई.वी.एम. मशीनों के साथ छेड़छाड़ का आरोप लगाते रहते हैं परंतु ई.वी.एम. मशीनों से किसी प्रकार की छेड़छाड़ संभव ही नहीं है। चुनाव आयोग भी चुनाव सुधारों की दिशा में सतत सक्रिय है। वह सरकार को कई प्रकार के सुझाव देता रहता है। प्रो. किरण गुप्ता ने चुनाव सुधारों पर अपने सारगर्भित विचारों को रखा। उन्होंने कहा कि चुनाव कराने के लिए सरकार को बहुत पैसा खर्च करना ही पड़ता है किंतु प्रत्याशियों को चुनाव लड़ने के लिए प्रचार आदि पर भी बहुत पैसा खर्च करना पड़ता है इसलिए आम आदमी तो चुनाव लड़ने की बात सोच तक नहीं सकता शायद इसीलिए अब जो लोग चुनाव मैदान में उतर रहे हैं, वह करोड़पति होते हैं। क्या इन सभी करोड़पतियों के मन में जनता की सेवा का भाव होता है? नहीं, शायद वह भ्रष्टाचार के माध्यम से इन करोड़ों में और इजाफा करना चाहते हैं या फिर सत्ता सुख भोगना चाहते हैं। यह कहना भी गलत नहीं होगा कि चुनावों में इन करोड़पतियों की लंबी लाइन के समक्ष आम आदमी आगे आने की सोच भी नहीं सकता। इस तरह यह चुनावों में खड़े होने के संबंध में समानता के सिद्धांत पर यह सीधा आघात है जो लोकतंत्र का नाकार है। चुनावों में पैसे के इस प्रकार के प्रभाव के पक्ष पर भी चिंतन-मनन होना चाहिए।

महामना मदन मोहन मालवीय न्यास के श्री पी.एल. जयसवाल ने भी चुनाव सुधारों पर अपने सारगर्भित विचार रखते हुए कहा कि चुनाव के समय राजनीतिक दल मतदाताओं को लुभाने के लिए उन्हें बड़े-बड़े उपहारों का वायदा करते हैं कोई लैपटॉप देता है, कोई रंगीन टेलीविजन, कोई एक रुपए किलो की दर से चावल, धोतियाँ, यहाँ तक कि मंगल सूत्र देने का वायदा करते हैं, जिससे सरकारी राजस्व प्रभावित होता है। निशुल्क बिजली आपूर्ति का या ऋण माफी का वायदा किया जाता है। वास्तव में ऐसे वायदों की इजाजत नहीं होनी चाहिए। यह एक प्रकार की सरकारी खर्चे पर घूस देना हुआ। चुनावों में इन

पर रोक लगनी चाहिए।

विधि भारती परिषद् की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना ने संगोष्ठी के विषय का समाहार करते हुए कहा कि आज के मंथन से जो-जो अच्छे सुझाव उभर कर सामने आए हैं, उन पर कार्यवाही होनी चाहिए। चुनावों में भ्रष्टाचार का कोई एक रूप नहीं है। प्रत्येक चुनाव में, चाहे वह आम चुनाव हों, या राज्यों के चुनाव हों, ऐसे समाचार प्रकाशित होते रहते हैं कि मतदाताओं को पैसा दिया जाता है या शराब की बोतलें बाँटी जाती हैं।

2014 के आम चुनावों में बताया गया कि चुनाव आयोग ने 313 करोड़ से अधिक नकदी बरामद की जो कि मतदाताओं को देने के लिए थी। इसके लिए चुनाव आयोग, नकदी, शराब या दूसरी अवैध वस्तुओं को पकड़ने के लिए प्लाइंग दस्तों की ड्यूटी लगाता है।

इसके अलावा, चुनावों में बाहुबलियों की भूमिका भी सर्वविदित है। इनकी भूमिका भी कई प्रकार की होती है। यह लोग चुनाव लड़ते हैं तो गरीब मतदाताओं को डरा, धमका कर उनसे वोट हासिल करते हैं। अपराधी तत्त्व चुनावों में प्रत्याशी बनते हैं और जीतते भी हैं। राजनीतिक दल अपनी धनराशि का सही हिसाब-किताब नहीं रखते, उनको कितना पैसा कहाँ से मिलता है, इसमें पारदर्शिता नहीं है। कई बार तो लगने लगता है कि अगर लोकतंत्र की नींव में ही भ्रष्टाचार रहेगा तो देश में सुशासन की आशा करना रेत से पानी निकालने जैसा है। समय-समय पर कई समितियों ने चुनाव सुधारों के सुझाव दिए हैं, किंतु उन पर अमल करने की दिशा में वाँछित कार्य नहीं हुआ है। अतः यह बहुत जरूरी है कि चुनावों की लोकतंत्र की गंगा के गोमुख का स्वच्छ रखा जाए। लोकतंत्र बचाने के लिए सतर्कता रखी जानी चाहिए।

जिन प्रतिभागियों ने संगोष्ठी में भाग लिया और जिन्होंने अपने आलेख प्रस्तुत किए, उन सब को विधि भारती परिषद् की तरफ से प्रमाण-पत्र भी प्रदान किए गए।

'भारत में चुनाव : हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार' जैसे अति महत्त्वपूर्ण विषय पर अत्यधिक सुव्यवस्थित एवं सफल कार्यक्रम का आयोजन करने के लिए विधि भारती परिषद् की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना, अध्यक्ष पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप, डॉ. के.एस. भाटी एवं श्रीमती मंजू चौधरी और उनकी पूरी टीम बधाई और साधुवाद की पात्र हैं।

समारोह के अंत में श्रीमती सन्तोष खन्ना ने संगोष्ठी के समापन पर सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त किया।

❑

फोन : 011-27491549
मोबाइल : 09899651272
09899651872

सदस्यता फॉर्म

विधि भारती परिषद्
बीएच-48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088

महिला विधि भारती पत्रिका यू.जी.सी. की सूची में भी शामिल है।

कृपया मुझे विधि भारती परिषद् का सदस्य बनाने की कृपा करें। मेरा चैक/बैंक ड्रॉफ्ट संलग्न है --

1.	वार्षिक सदस्य शुल्क	450/-- रुपए
2.	आजीवन सदस्य शुल्क	4000/-- रुपए
3.	संस्थागत वार्षिक सदस्य शुल्क	500/-- रुपए
4.	संस्थागत आजीवन सदस्य शुल्क	20,000/-- रुपए

नाम : ....

शैक्षिक योग्यता : ....

व्यवसाय : ....

कोई प्रकाशित कृतियाँ : ....

स्थाई पता : ....

फोन (कार्यालय) : .... **(घर) :** ....

मोबाइल : .... **ई-मेल :** ....

नोट : विधि भारती परिषद् की सदस्यता के लिए शुल्क परिषद् के बैंक खाते में जमा कराया जा सकता है। कृपया शुल्क के साथ बैंक सेवा चार्ज 100/-- रुपए जमा कराएँ।

Vidhi Bharati Parishad : SBI SB Account No. 10115361055
IFSC Code : SBIN0003702

Our New Life Members

230. **Dr. Anju Khanna**
Associate Professor
(Law), Deptt. of Law, MD University
Rohtak, Haryana
231. **Dr. Anupama Yadav**
BHEL College, Bhopal
232. **Dr. Vinod Kumar Bagoria**
Assistant Professor
Faculty of Law
Jai Naryan Vyas University, Jodhpur
233. **Shri Ramchandra Chauhan**
Ramdeo Colony,
Gautam Rishi Mandir ke Pass,
Jalore, (Rajasthan)
234. **Ms. Bhavana Kataria**
B-502, IRWO Wastern Tower
Sector 47, Rail Vihar Subhash Chowk
Sohna Road, Gurgaon-122001
235. **Dr. Poonam Khanna**
Lecture-in-Law
Modern College of Law
99. Model Town
Ghaziabad-201001
236. **Ms. Tai Chourasia**
At Post : Parbhat Pattern
Distt, Betul (M.P.) 460665
237. **Shri Virender Kumar Chadar**
113, Police Lane
Tikamgarh (Madhya Pradesh)
Pin-472001
238. **Shri Rajendra**
Assistent Professor (Law)
Dayanand College of Law
Civil Lines, Kanpur
239. **Shri Ram Singh Patel**
Pt. Moti Lal Nehru P.G. College
Chhatarpur, Madhya Pradesh
240. **Shri Ram Ashish Srivastava**
Guest Faculty, Dr. Hari Singh Gaur
University, Sagar
241. **Ms. Bhavana Arora**
Lecturer, Modern College of Law
Ghaziabad, U.P.
242. **Dr. Zaki Hussain**
Associate Professor
Kanpur Law College, Kanpur
243. **Dr. Anuragender Kumar Nigam**
Faculty Member
Patanjali IAS Institute
Mukherjee Nagar, Delhi-110009
244. **Dr. Shobha Bhardwaj**
Assitant Prof. Department of Law
Jagran University, Bhopal
245. **Dr. Bhumika Sharma**
Assistant Professor,
Department of Laws
Solan, Himachal Pradesh
246. **Dr. Sonia Sharma**
Assistant Professor
Mata Sundari College, DU, New Delhi
247. **Dr. Shilpi Seth**
Assistant Prof. School of Law
Mohan Lal Sukhadia University
Udaipur, Rajasthan
248. **Dr. Nilima Singh**
Assistant Professor
13 New MIG Preetam Nagar,
Allahabad-211011
249. **Ms. Vijayshree Boaddha**
Barkatullah University
Bhopal (M.P.)
250. **Dr. Nisha Kewalia**
Assistant Prof. IPSA, Indore, (M.P.)
251. **Shri Guru Ditta Malhotra**
Teacher, Government School,
Talwamdi Bhai, Ferozepure
252. **Ms. Rinku Gangwani**
Lecture, School of Law,
Mohan Lal Sukhadia University
Udaipur, Rajesthan
253. **Smt. Samta Dube Tiwari**
Assistant Superindent (Jail)
Central Jail, Bhopal, Madhya Pradesh
254. **Ms. Suman**
Research Scholar
Deptt. of Political Science
Delhi University, Delhi-110007
255. **Dr. Shikha Kaushik**
Lecturer, D.A.V. College, Budhana,
Muzaffarnagar, Uttar Pradesh
256. **Dr. Jagdish Chandra Batra**
Senior Advocate
Supreme Court of India
New Delhi-110001
257. **Dr. Samiksha Godhra**
Assistant Professor, Law Deptt.
Central University of Haryana
Mahindra Garh, Haryana
258. **Shri Vipin Kumar Singh**
Research Scholar, Law Deptt.
Allahabad University, Allahabad